अक्तूबर - दिसंबर 1999 वर्ष : 31 * अंक : 4

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

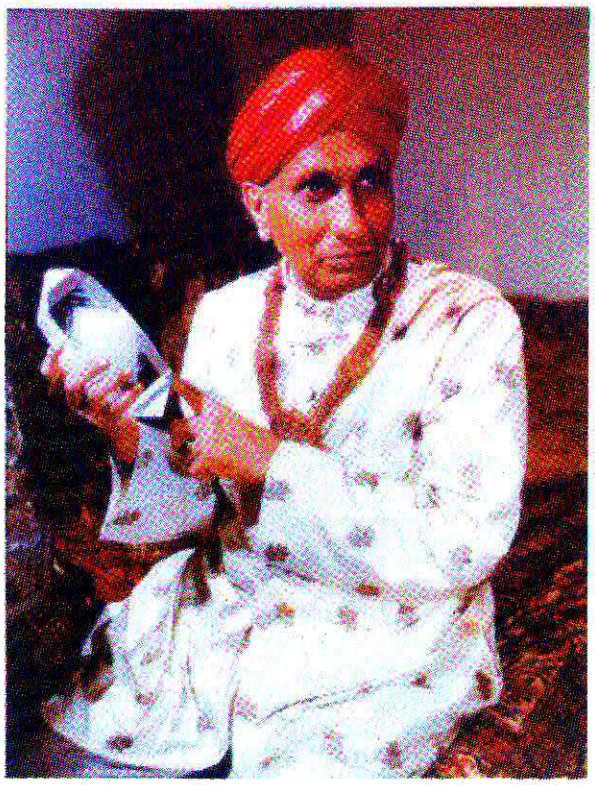

भारतीय वैज्ञानिक सर सी. वी. रमन

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

परिषद हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार हेतु नियमित रूप से त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक" का प्रकाशन, विज्ञान गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

परिषद की सदस्यता एवं "वैज्ञानिक" पत्रिका का शुल्क इस प्रकार है :

परिषद सदस्यता (रु. में)				वैज्ञानिक शुल्क (रु. में)	
	एक वर्ष	आजीवन	संरक्षक		एक वर्ष
व्यक्तिगत	50	400	5000	व्यक्तिगत	50
संस्थागत	100	1000		संस्थागत	100

- "वैज्ञानिक" पत्रिका की कोई आजीवन सदस्यता / शुल्क नहीं है।
- वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को "वैज्ञानिक" निःशुल्क भेजी जाती है।
- सभी शुल्क **हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद** के नाम से केवल **डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई)** द्वारा ही भेजें। **मुंबई** से बाहर के चैक, मनीआर्डर एवं पोस्टल आर्डर द्वारा भेजा शुल्क स्वीकार नहीं होगा।
- कृपया शुल्क के साथ अपना निजी विवरण इस पत्रिका में दिये गये आवेदन पत्र के प्रारूप के अनुसार भेजें।
- संरक्षक सदस्य, यदि चाहें तो, उनका एक विज्ञापन प्रतिवर्ष "वैज्ञानिक" में निःशुल्क छापा जा सकता है।

-: *"वैज्ञानिक"* में विज्ञापन :-

हिंदी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में "वैज्ञानिक" अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सेमी x 21 सेमी है।

विज्ञापन की दरें (प्रति अंक)

अंतिम आवरण	: रु. 2,500/-	पूरा पृष्ठ	: रु. 1,500/-
दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर)	: रु. 2,000/-	आधा पृष्ठ	: रु. 800/-

डॉ. होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेखन प्रतियोगिता - 1999 के परिणाम

राजभाषा स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद तथा राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा प अ केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता के परिणाम इस प्रकार हैं :-

: सामान्य श्रेणी :

द्वितीय पुरस्कार (2000 रु) : 1. **श्री अखिलेश्वर कुमार तिवारी**, A-1 भारतीय लाख अनुसंधान संस्थान नामकुम, रांची (बिहार) 834010

2. **कु. मीता चटर्जी एवं कु. गीता चटर्जी**, द्वारा श्री प्रकाश चटर्जी, 'रेबा निवास,' 68/138 नेहरु मार्ग, आशुतोष नगर, ऋषिकेश (उ. प्र.) 249 201

तृतीय पुरस्कार (1000 रु) : **डॉ. कपूर मल जैन**, उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, पं. रविशंकर नगर, कलिया सोत बांध, कोलार रोड, पो. बॉ. नं. 588, भोपाल (म. प्र.) 462 016

प्रोत्साहन पुरस्कार (500 रु) : 1. **श्री अशोक श्रीधर रसाल**, भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, शिवाजीनगर, पुणे 411 005

2. **श्री नरेश चंद्र तिवारी**, न्यू हैदराबाद, केदारनाथ मार्ग, लखनऊ 226 007

3. **श्री संजय कुमार पाठक**, प्रशिक्षणार्थी (Trainee), एफ. आर. डी, भा प अ केंद्र, मुंबई 400085

4. **श्रीमती सुशीला एच. भंडारी**, भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, पुणे 411 005

: ऐसे प्रतियोगी जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं है :

प्रोत्साहन पुरस्कार (500 रु) : 1. **डॉ. अजीत कुमार सेन**, 32/10 पीस (Peace) रोड, पो. ऑ. लालघुर, रांची 834 001

2. **श्री नरेंद्र रामगोपाल**, अनावृष्टि अनुसंधान अनुभाग, अपर महानिदेशालय (अनु.), भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, शिवाजीनगर, पुणे 411 005

अ नु क्र म णि का

वैज्ञानिक

वर्ष 31 अंक 4

अक्तूबर - दिसंबर 1999

: व्यवस्थापन मंडल :

श्री गोरा चक्रवर्ती

(संयोजक)

डॉ. अशोक कुमार सूरी

श्री राम अवतार अग्रवाल

डॉ. सतीश कुमार गुप्ता

श्री कुलवंत सिंह

श्री राजेश कुमार

: संपादन मंडल :

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

(संयोजक)

श्री हरिओम मित्तल

डॉ. राज नारायण पांडेय

डॉ. भूपेंद्र सिह तोमर

डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला

वार्षिक शुल्क

संस्थागत	व्यक्तिगत
100 रु.	50 रु.

कार्यालय

"वैज्ञानिक", हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेन्ट्रल कांप्लेक्स
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
मुंबई - 400 085

संपादकीय 3

लेख

1. द्रवी-झिल्ली तंत्र : एक वैकल्पिक एवं उन्नत तकनीक 5
   - नारेंद्र सिंह राठौर
2. विश्व स्थिति निर्धारण तंत्र 15
   - काली शंकर
3. विज्ञान और धर्म के बीच एक मज़बूत सेतु - पोप जॉन पॉल द्वितीय 20
   - डॉ. देवकी नंदन
4. डीजल-पेट्रोल वाहनों से पर्यावरण प्रदूषण 24
   - एन. एस. त्यागी, आर. पी. कुलश्रेष्ठ एवं कालू राम
5. प्रमात्रा (क्वांटम) सिद्धांत का रसायन शास्त्र में उपयोग 28
   - कुमारी वंदना क., एवं प्रो. मनोज कुमार मिश्र
6. विज्ञान और संवेदनशीलता : मध्य-स्तरीय होने का मूल कारण एवं विज्ञान-प्रौद्योगिकी का भविष्य 31
   - डॉ. स्वप्न कुमार भट्टाचार्जी

टिप्पणियां

1. पर्यावरण विघटन और हमारा दायित्व 34
   - डॉ. अवधेश शर्मा
2. लेग्युमिनस (फलीदार) पौधों से प्राकृतिक रंगों का उत्पादन 35
   - सुभाष चंद्र एवं वी. पी. कपूर
3. हिंदी की उपेक्षित विधा है विज्ञान कथा साहित्य 38
   - विजय चितौरी
4. सौंदर्य प्रसाधनों के बढ़ते ख़तरे 39
   - डॉ. डी. डी. ओझा
5. कृषि एवं पशुपालन में केंचुओं का महत्त्व 41
   - डॉ. सतपाल सिंह बिष्ट
6. फसलोत्पादन में सूक्ष्म तत्त्वों का महत्त्व 42
   - डॉ. दिनेश मणि

● "वैज्ञानिक" में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

● "वैज्ञानिक" में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं. वि. सा. परिषद के पास सुरक्षित हैं।

● "वैज्ञानिक" एवं हिं. वि. सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा।

"वैज्ञानिक" का शुल्क

पाठकों से अनुरोध है कि यदि उनका 'वैज्ञानिक' का शुल्क समाप्त हो गया हो, तो उसे भेज कर नवीनीकरण करा लें। यदि संभव हो तो आजीवन सदस्य बन जायें।

विज्ञान समाचार
- भा. प. अ. केंद्र से 44
- अन्य विज्ञान समाचार 45

विज्ञान कविताएं
- अभिनंदन के फूल 47
- उपकारी रोबो 50

संगोष्ठी समाचार
1. बीसवीं सदी में भौतिक तथा इक्कीसवीं सदी के लिए उभरती दिशाएं (-99) 48
2. नोबेल पुरस्कार : किसे और किसलिए ? 49

वैज्ञानिक परिचय
- सर सी. वी. रामन 50

हिं. वि. सा. प. वार्षिक प्रतिवेदन - 1998-99 51

कुछ फूल : कुछ कांटे 54

आजीवन सदस्यता / "वैज्ञानिक" ग्राहकों के लिए आवेदन पत्र का प्रारूप

श्री नंद लाल सोनी

कोषाध्यक्ष, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, रिएक्टर सुरक्षा प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400 085.

प्रिय महोदय

मैं, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद (भापअ केंद्र, मुंबई) का आजीवन सदस्य / "वैज्ञानिक" पत्रिका का ग्राहक बनने का इच्छुक हूं। मेरा निजी विवरण एवं शुल्क* संबंधित विवरण निम्नलिखित है :

नाम (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____

पता (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____

_____ _____

_____ _____

व्यवसाय :

हिंदी की पात्रता : _____ प्रवीणता _____

(Qualification) _____ (Specialisation) _____

डिमांड ड्राफ्ट सं. . . . . .दिनांक. . . . . बैंक . . . . . .रु. . . . . .

दिनांक : हस्ताक्षर :

*शुल्क 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद्' के नाम केवल डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई) द्वारा ही कोषाध्यक्ष को भेजें।

संपादकीय

संसूचन में एक नया आयाम : वायुमंडलीय अवध्वनि

अवध्वनि (इन्फ्रासाउंड) को कवि रॉबर्ट सर्विस के 'बेलाड ऑफ नॉर्दर्न लाइट्स' में निस्तब्ध ध्वनि की संज्ञा दी है जो रेशम जैसी मुलायम तथा दूध के सौम्य बहाव के तरह व्यवहार करती है। पराश्रव्य ध्वनि यानी अल्ट्रासाउंड जो हमें सुनाई नहीं पड़ती है, के द्वारा किये जाने वाले संसूचन कार्यों ने विज्ञान के कई क्षेत्रों में अपनी प्रभुता स्थापित करके बेहतर जीवन का मार्ग प्रशस्त किया है। अल्ट्रासाउंड द्वारा शरीर के अंदर का चित्र लेकर कई असाध्य बीमारियों के इलाज में चिकित्सकों को भरपूर सहायता मिलती है और लोगों को जीवनदान। श्रव्य ध्वनि की तरंगों का एक दूसरा छोर जिसकी आवृत्ति 20 हर्त्स से कम रहती है, पराश्रव्य ध्वनि (आवृत्ति 20,000 हर्त्स से अधिक) की भांति सुनाई नहीं पड़ती है। इस अवध्वनि का भी उतना ही महत्व है जितना अन्य तरंगों का। यह उल्लेखनीय है कि कई प्राकृतिक घटनाओं के दौरान इस श्रेणी के सिगनल प्राप्त होते हैं। इन घटनाओं में प्रमुख हैं - हिमस्खलन, उल्का पात, समुद्रीय तरंग, विकराल मौसम, टॉरनेडो, भूकंप, ज्वालामुखी, अशांत (उग्र) पर्यावरण इत्यादि।

अवध्वनि का सबसे रोचक एवं उपयोगी गुण यह है कि इसका सिगनल बिना ह्रास हुए ग्लोबल (सार्वभौमिक) दूरियों तक जा सकता है। यह तो सुविदित है कि श्रव्य ध्वनि जिसमें उच्च आवृत्ति की तरंगें मौजूद रहती हैं, हमें 20-30 किमी. से अधिक दूरी से नहीं सुनाई पड़ती हैं क्योंकि इनका वातावरण में अवशोषण हो जाता है। एक अनुमान के आधार पर 1000 हर्त्स की ध्वनि का 10% वातावरण में अवशोषित हो जाता है जबकि 1.0 हर्त्स की ध्वनि 300 किमी. और 0.01 हर्त्स की तरंग पृथ्वी की परिधि तक जा सकती है।

कुछ मान्यताओं के आधार पर अक्सर ऐसा कहा जाता है कि कुछ जानवरों में एक विचित्र अनुक्रिया होती है जिससे उनको भूकंप का पूर्वाभास हो जाता है। बताया जाता है कि चीन में इस दिशा में तीव्र शोध गतिविधियां चल रही हैं। पशु जगत में जहां एक ओर चमगादड़ तथा कुत्ते पराश्रव्य ध्वनि को पहचान पाते हैं वहीं हाथी दूर संचार के लिए अवध्वनि का उपयोग करते हैं। कबूतरों में भी अवध्वनि को पहचानने की सुग्राहकता होती है। एक अत्यंत ताजी खोज के आधार पर पता चला कि डायनासोर भी कम आवृत्ति की ध्वनि उत्पन्न कर सकते थे।

यह एक रोचक तथ्य है कि वायुमंडलीय अवध्वनि के प्रति रुचि शीत युद्ध के दौरान बढ़ी क्योंकि इनका संसूचन कई अन्य पद्धतियों में से एक था जिसके द्वारा ग्लोबल दूरियों पर नाभिकीय विस्फोटों के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती थी [संपादकीय - वैज्ञानिक : जनवरी-जून 1998- अंक 30 (1/2)]। अब जबकि सी टी बी टी की प्रमुखता एवं आवश्यकता दिनोदिन बढ़ती जा रही है, पर्यावरणीय अवध्वनि की ओर विश्व का ध्यान एक नये उत्साह तथा रुचि के साथ बढ़ रहा है। अत्यंत कम आवृत्ति की ध्वनि का संसूचन तथा अभिलेखन (रिकॉर्डिंग) अत्यंत महत्वपूर्ण शोध क्षेत्र के रूप में उभर रहा है। अगर हम इतिहास के पन्ने पलटें तो स्पष्ट होता है कि शीत युद्ध से पूर्व सबसे महत्वपूर्ण संसूचन 1883 के क्राकाटोआ ज्वालामुखी विस्फोट तथा 1909 के ग्रेट साइबेरियन उल्कापात के थे। 1950 के आरंभ के वर्षों में ग्लोबल इन्फ्रासोनिक मॉनीटरिंग नेटवर्क लगाये गये। बाद में 1963 में जब एक मर्यादित परमाणु परीक्षण रोक संधि पर सहमति हुई, एक प्रगत अवध्वनि मॉनीटरिंग प्रणाली विकसित की गयी थी।

हालांकि इस प्रणाली को किसी कारण नहीं लगाया गया। 1970 के दशक में जब पर्यावरण अवध्वनि के विज्ञान पर कार्य बढ़ा और पता चला कि वातावरण में पहले हम जिसे नॉयज समझ कर छोड़ देते थे वे वास्तव में सुदूर क्षेत्र में घटी किसी भूभौतिकीय (जियोफिजिकल) घटना के हस्ताक्षर थे। इस भूभौतिकीय नॉयज के बारे में ज्ञान बढ़ते ही इसका महत्व सी टी बी टी मॉनीटरन के लिए और अधिक हो गया। ध्वनि चाहे श्रव्य हो अथवा नहीं, वायु में अनुलंब संपीडन एवं प्रसार तरंग के समरूप होती है। अवध्वनि का पता चलाने में आधुनिक माइक्रोबेरोग्राफ अथवा कम आवृत्ति के माइक्रोफोन प्रयुक्त होते हैं जो ध्वनि तरंगों के संचरण से उत्पन्न 10^{-8} वायुमंडलीय दाबांतर को माप सकते हैं। हालांकि यह सुग्राहकता श्रव्य ध्वनि के लिए हमारे कान की सुग्राहकता के मुकाबले 45 गुना कम है। अधिक शुद्ध मापन हेतु आजकल अवध्वनि के ज्ञात आकाशीय एवं टेम्पोरल गुण तथा अवांछित नॉयज के गुणों से संबंधित फिल्टरों का उपयोग किया जाता है। ध्वनि का एक ज्ञात गुण तो यह है कि इसकी गति 344 मी/से. रहती है और साथ ही कुछ कलाबद्धता भी। एक लंबे आवर्तकाल की तरंगें दूरदराज़ में हुए विस्फोटों के संकेत होते हैं। इसके अलावा अवध्वनि संकेत जो पृथ्वी की सतह पर मार्गदर्शित होते हैं 'लैंबवेव' कहलाते हैं।

अभी पृथ्वी के प्राकृतिक अवध्वनि पर्यावरण की हमारी जानकारी केवल घटना क्रिया विज्ञान पर ही आधारित है। गुणात्मक और पूर्णरूप से परीक्षित आंकड़े व मॉडल उपलब्ध नहीं हैं। नयी अवध्वनि मॉनीटरन प्रणालियां न केवल इस विषय को समृद्ध करेंगी बल्कि कई ग्रहों के पर्यावरण के अन्वेषण में भी सहायक बनेंगी। अभी हाल में विफल मंगल पोलर लैंडर में भी मंगल ग्रह के पर्यावरण की कुछ जानकारी ग्रहण करने हेतु एक सूक्ष्म माइक्रोफोन रखा गया था जिसका भविष्य अभी एक रहस्य ही कहा जा सकता है।

मानवता की भलाई में प्रकृति में उपलब्ध संकेतों की भूमिका कैसी हो सकती है यह 21 वीं शती का विज्ञान ही बता पायेगा।

"वैज्ञानिक" का यह अंक वर्ष 1999 का अंतिम अंक है। 21 वीं सदी में प्रवेश करता हुआ विज्ञान किन चुनौतियों तथा दिशाओं का भागीदार रहेगा, इसको समझ पाना एक कठिन कार्य है। फिर भी वैज्ञानिक समुदाय अपनी प्रकृति के अनुरूप कुछ न कुछ पूर्वानुमान लगाता रहा है। इस संदर्भ में भौतिकी की दिशा पर हुई एक संगोष्ठी की झलक इस अंक में प्रस्तुत की गयी है। इस अंक में सामान्य लेख-टिप्पणियों-कविताओं के अतिरिक्त भारत के मध्यमस्तरीय विज्ञान की स्थिति पर एक विश्लेषण का समावेश भी किया गया है। 'परिषद' की वार्षिक रिपोर्ट और डॉ. होमी भाभा विज्ञान लेख प्रतियोगिता (1999) के परिणाम भी दिये गये हैं। इस वर्ष के 'प्रतियोगिता' परिणाम की विशेषता यह है कि अहिंदी भाषी प्रतियोगियों के लेख उच्च कोटि के रहे। निसंदेह यह एक अत्यंत उत्साहजनक परिदृश्य है परंतु हिंदी भाषी लोगों की विज्ञान लेखन के प्रति उदासीनता काफी दुःखदायी भी है। इन वैज्ञानिक / विज्ञान लेखकों को अपने सामाजिक दायित्व के प्रति पुनः जागृत होने की आवश्यकता है। अंत में बीसवीं शताब्दी के नंबर एक भारतीय वैज्ञानिक सर सी. वी. रमण को 'वैज्ञानिक' परिवार की ओर से नमन तथा पाठकों के सुझावों की अपेक्षा के साथ . . .

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

द्रवी-झिल्ली तंत्र : एक वैकल्पिक एवं उन्नत तकनीक

नारेंद्र सिंह राठौर
बी. ए. आर. सी., प्रिफ्री संयंत्र,
पो. ऑ. : घिवली, जि. : थाना
महाराष्ट्र - 401 502

अपशिष्ट जल से उपयोगी धातुओं एवं विषैले तत्त्वों को पृथक करने की दिशा में द्रवी-झिल्ली एक महत्वपूर्ण विकल्प के रुप में सामने आयी है । विशेष रूप से जलीय धातुकर्मी में, जहां धातु या विलेय को पुनः प्राप्त या पृथक करना होता है, यह तकनीक अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रही है । प्रस्तुत लेख में विभिन्न प्रकार की द्रवी-झिल्लियों की क्रियाविधि पर प्रकाश डाला गया है ।

शताब्दी पूर्व से धातु आयन पृथक्करण एवं निष्कर्षण के क्षेत्र में ज्ञात आयन-विनिमय, साधारण विलायक निष्कर्षण एवं सहअवक्षेपण जैसी तकनीकें अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच चुकी हैं। इनमें कुछ कठिनाइयों एवं सीमाओं के कारण आजकल विकल्प की ओर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है, जिससे उनमें आनेवाली कठिनाइयों का हर संभव निवारण एवं उसकी उपयोगिता सहज हो सके ।

द्रवी-झिल्ली (Liquid membrane) तंत्र जो हमारे समक्ष एक विकल्प के रुप में प्रकट हुआ है, ज्ञात विलायक निष्कर्षण एवं सांद्रण तकनीक में परिवर्तन का परिणाम है । द्रवी-झिल्ली पारगम्यता एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पृथक्करण, निष्कर्षण, विसरण एवं अपखंडन एक ही पद में संपन्न होते हैं इसमें एक स्थानांतरित होने वाली आयन युक्त जलीय-प्रावस्था, एक जलांतकीय-प्रावस्था एवं दूसरी जिसमें आयनों का स्थानांतरण होता है, जलीय प्रावस्था उपस्थित होती है ।

इस क्रिया विधि को संक्षिप्त रूप से निम्न समीकरण के द्वारा प्रदर्शित किया गया है :

$$\underset{\text{(जलीय)}}{M^{2+}} + \underset{\text{(कार्ब.)}}{2H_2A_2} \underset{\text{अपखंडन}}{\overset{\text{निष्कर्षण}}{\rightleftharpoons}} \underset{\text{(कार्ब.)}}{M(HA_2)_2} + \underset{\text{(जलीय)}}{2H^+} \quad ...(1)$$

जहाँ M^{2+}= धातु-आयन, H_2A_2 = निष्कर्षण/वाहक

द्रवी-झिल्ली पृथक्करण की प्रभाविता, उसके पारगमक अभिवाह/गालक जो झिल्ली से होकर गुजरता है, के द्वारा आँकी जाती है, जिसे पारगम्यता गुणांक (P), प्रतिशत पारगम्यता (%P) एवं $K_{(\text{प्रेक्षण})}$ के द्वारा व्यक्त कर सकते हैं ।

$$P = \frac{-\ln \frac{C_t}{C_o} \times V}{A \times -t} \text{ मी./से.} \quad ...(2)$$

$$\%P = \frac{C_t}{C_o} \times 100 \quad ...(3)$$

$$K_{(\text{प्रेक्षण})} = \frac{\ln \frac{C_t}{C_o}}{t\,(\text{समय})} \text{ प्रति सेकंड} \quad ...(4)$$

जहाँ, C_t = निश्चित समय पर सांद्रता; C_o = प्रारंभ में सांद्रता; V = द्रव का आयतन; A = क्षेत्रफल; t = समय । संक्षिप्त रुप से विभिन्न प्रकार के द्रवी-झिल्ली तंत्रों का विवरण आगे प्रस्तुत है :

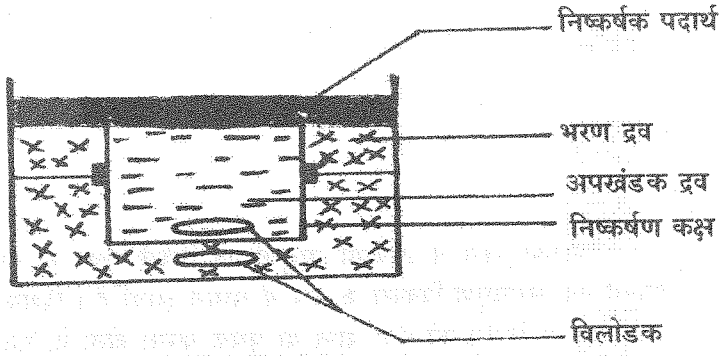

(अ) साधारण प्रकार

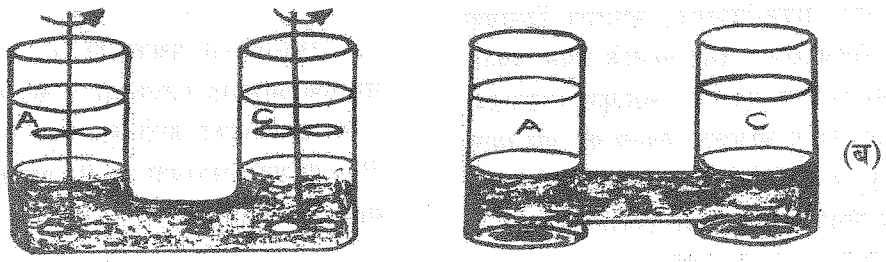

(ब)

यू-ट्यूब सेल्स के प्रकार

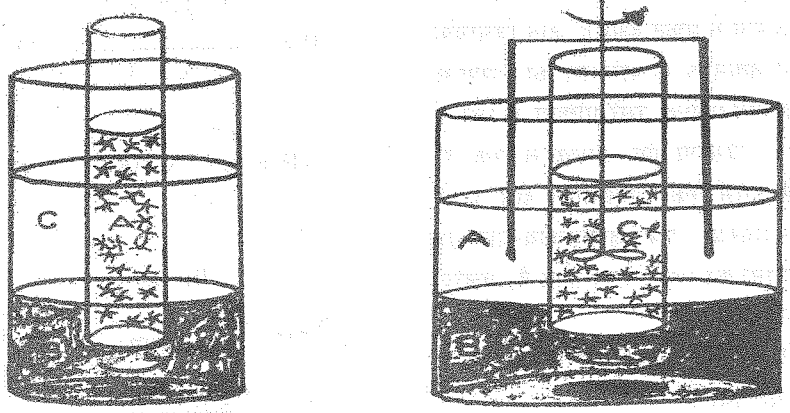

(स) A -कक्ष के अंदर ट्यूब सेल्स के प्रकार

चित्र - 1 : स्थूल द्रवी-झिल्ली एवं उनके विभिन्न प्रकार

(क) स्थूल द्रवी-झिल्ली तंत्र :

द्रवी-झिल्ली तंत्रों के विकास के प्रथम चरण में इसका उल्लेख मिलता है, जिसमें एक स्थूल कार्बनिक प्रावस्था होती है, जो दो जलीय प्रावस्थाओं को पृथक करती है। स्थूल तंत्र की संरचना अत्यंत सरल होती है (चित्र-1) तथा आर्थिक दृष्टिकोण से विलायक-निष्कर्षण की तुलना में किफायती भी क्योंकि अपेक्षाकृत इसमें कार्बनिक पदार्थ कम मात्रा में प्रयोग किया जाता है। प्रेक्षण तालिका - 1 में Zn^{2+} के एम. टी. पी. ए. के द्वारा पारगमन आँकड़े प्रस्तुत किये गये हैं जो इस तंत्र की छनित्र-वाहक के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण उपयोगिता साबित करती है।

तालिका 1 :
स्थूल द्रवी-झिल्ली की सहायता से जिंक (Zn^{2+}) का पृथक्करण

भरण प्रावस्था : 230 मि. ग्रा. प्रति लि. Zn^{2+}
झिल्ली प्रावस्था : 3.4
निष्कर्षक : डाई (2-इथाइल हेक्सिल) थायो फॉस्फोरिक अम्ल (एम. टी. पी. ए.)
तनुकारक : शेलसॉल टी (पैराफिन)
अपरवंडक प्रावस्था : 250 ग्रा. प्रति ली. सल्फ्यूरिक अम्ल

समय (घंटा)	प्रतिशत पारगम्यता (% P)
1	58.68
2	60.48
3	66.46
4	63.49
5	65.52
6	68.62
7	85.45
8	86.48

(ख) आधार युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र :

इसमें छिद्रित प्लास्टिक आधार का प्रयोग होता है जिसे तनुकारक युक्त निष्कर्षक से पूर्ण रूपेण संसेचित कर दिया जाता है जो द्रवी-झिल्ली की भाँति कार्य करता है। आधार युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र के अध्ययन को निम्न दो वर्गों में विभक्त किया गया है; (i) सपाट चादर एवं (ii) खोखली तंतु द्रवी-झिल्ली तंत्र।

(i) सपाट चादर आधार युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र :

इस प्रकार के तंत्र में द्रवी-झिल्ली एक छिद्रित चादर के रूप में होती है। मुख्य धारा जिसमें से आयन पृथक करना होता है उसे दुर्दांत या रेखीय प्रवाह के रूप में इसके संपर्क में लाते हैं, जिससे द्रवी-झिल्ली की दूसरी ओर आयन अपखंडक प्रावस्था में स्थानांतरित हो जाता है। इस तंत्र में स्थूल द्रवी-झिल्ली तंत्र से कई गुना कम मात्रा में निष्कर्षक पदार्थ का प्रयोग होता है। इसे चित्र-2 की सहायता से दर्शाया गया है। सपाट चादर आधार युक्त द्रवी-झिल्ली के द्वारा अनेक प्रयोग सफलतापूर्वक किये गये हैं।

(ii) खोखली तंतु द्रवी-झिल्ली :

खोखली तंतु का निर्माण सूक्ष्म रंध्र युक्त दीवार के नली रूप में परिवर्तन करने से होता है। ये दीवार या तंतु (कुछ शोध पत्रों के अनुसार अवशोषक) खोखली तंतु द्रवी-झिल्ली की अंतः अवस्था को अचल रूप प्रदान करते हैं। इसकी संरचना, तंत्र में अत्यंत सरल होती है (चित्र-3)। खोखली तंतु को बंडल के रूप में काँच की नली में डालकर दोनों ओर से इस प्रकार से सील किया जाता है कि अगल-बगल से द्रव का रिसाव न हो कर केवल खोखली-तंतु से ही प्रवाहित हो सके। काँच की नली में एक ओर से अपखंडक विलयन के प्रवेश एवं दूसरी ओर से निकास का प्रावधान होता है।

इस तंत्र में द्रव्यमान स्थानांतरण सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा भरण प्रावस्था से अपखंडक विलयन की ओर निष्कर्षक विलायक की सहायता से होता है। क्रिया-विधि को चित्र - 4 के माध्यम से दर्शाया गया है। इसके भी विभिन्न प्रकार के संकरों का निर्माण किया जा चुका है; जैसे आधारयुक्त खोखली तंतु द्रवी-झिल्ली पर ट्रेक्टर एवं स्थूल द्रवी-झिल्ली युक्त नली प्रकार खोखली तंतु। इन दोनों में अंतर यह है कि - प्रथम प्रकार में निष्कर्षक विलायक को तंतु से प्रवाहित कर अच्छी तरह संसेचित कर दिया जाता है, जबकि दूसरे में स्थूल मात्रा में निष्कर्षक विलायक, लगातार तंतु के संपर्क में रहता है। दोनों की क्रिया-विधि लगभग एक समान होती है। खोखले-तंतु की सहायता से विलेय को गैसीय अवस्था से पृथक करने जैसे अत्यंत उन्नत एवं सहज तकनीक का निर्माण संभव हो सका।

(ग) संकर द्रवी-झिल्ली :

इस तंत्र का विकास स्थूल एवं आधार युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र के संयुग्मन से हुआ है। इसमें निष्कर्षक अभिकर्मक जो वाहक विलयन के रूप में जाना जाता है, का प्रवाह झिल्ली के मध्य होता है। यह झिल्ली तंत्र वाहक, भरण एवं अपखंडक विलयन को एक दूसरे से पृथक रखता है तथा विलेय को अभिगमित करने में सक्षम होता है, लेकिन वाहक को भरण या अपखंडक की ओर अभिगमन से रोकता है। यह झिल्ली जलरागी, जल-विरागी या आयन विनिमय गुणों से युक्त होती है, जिससे वाहक को अपने में से होकर जाने से रोकती है या फिर इसके छिद्र के आकार के द्वारा अवरोधक प्रवृत्ति के कारण अभिगमित नहीं होने देती है। इस तंत्र में निष्कर्षक द्रव की मात्रा स्थूल द्रवी-झिल्ली से कम परंतु आधार युक्त द्रवी-झिल्ली से अधिक होने के कारण निसंदेह इसकी आयु आधार युक्त द्रवी-झिल्ली से अधिक होती है जो इसके प्रयोग को अधिक विशिष्टता प्रदान करती है। इसके द्वारा उच्च पारगम्यता प्रतिशत काफी समय पश्चात् प्राप्त होता है। परंतु यह समय उसमें प्रयुक्त निष्कर्षक परत की मोटाई पर निर्भर होता है।

(घ) पायस द्रवी-झिल्ली :

इस तंत्र में, जल को निष्कर्षक में तीव्र गति से विलोडित करने पर जलीय प्रावस्था में ही पायस उत्पन्न किया जाता है जिसे स्थायित्व प्रदान करने के लिए स्पान-80 सर्फक्टैन्ट का प्रयोग किया जाता है। विस्तृत अध्ययन से ज्ञात हो चुका है कि इस तरह से प्राप्त पायस द्रवी-झिल्ली की तरह कार्य करते हैं, जिससे आयन एवं अणु आसानी से अभिगमित किये जा सकते हैं; यह दो प्रकार का होता है (i) पायस युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र एवं (ii) पायस मुक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र।

(i) पायस युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र :

इसमें पायस के बनते समय अपखंडक जलीय प्रावस्था, कार्बनिक या निष्कर्षक प्रावस्था के द्वारा घिर जाता है (चित्र-5) तथा जब इसे आयन युक्त जलीय या भरण प्रावस्था से प्रवाहित किया जाता है तो आयन कार्बनिक या निष्कर्षक प्रावस्था जो द्रवी-झिल्ली की भाँति कार्य करता है, में निष्कर्षित हो जाता है तथा केंद्र में अपखंडक प्रावस्था की उपस्थिति के कारण पूर्ण रूपेण सांद्रित हो जाता है। इस सांद्रित धातु आयन को प्राप्त करने के लिए पायस को रासायनिक या वैद्युतीय प्रक्रिया से तोड़कर शुद्ध रूप में प्राप्त कर लिया जाता है। इसकी संपूर्ण प्रक्रिया Cu^{2+} के निष्कर्षक द्वारा चित्र-5 में विधिवत दर्शायी गयी है। इसका दूसरा उदाहरण विस्कास फाइबर उद्योग में Zn^{2+} का 6 ग्राम/ली. H_2SO_4 माध्यम से निष्कर्षण को तालिका-2 में प्रस्तुत किया गया है। यह तंत्र अपने अच्छे द्रव्यमान अभिगमन, उच्च गतिजता तथा निष्कर्षक के अधिक से अधिक पृष्ठक्षेत्र की उपयोगिता जैसे विशिष्ट लक्षणों के कारण बड़े पैमाने पर सर्वाधिक प्रयुक्त हो रहा है।

(ii) पायस मुक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र :

इसमें पायस बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, तथा आयनों का अभिगमन कुछ सीमा तक स्थूल द्रवी-झिल्ली की भाँति होता है। इस तंत्र में भरण प्रावस्था के सूक्ष्म द्रवी गोले बनाकर दबाव युक्त दवा की सहायता से

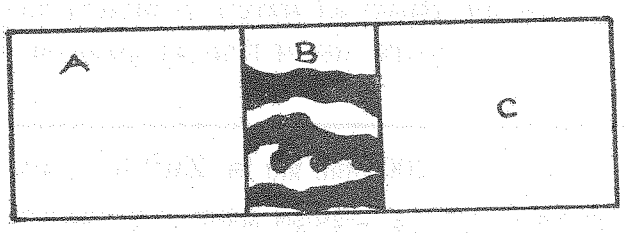

छिद्रित आधार

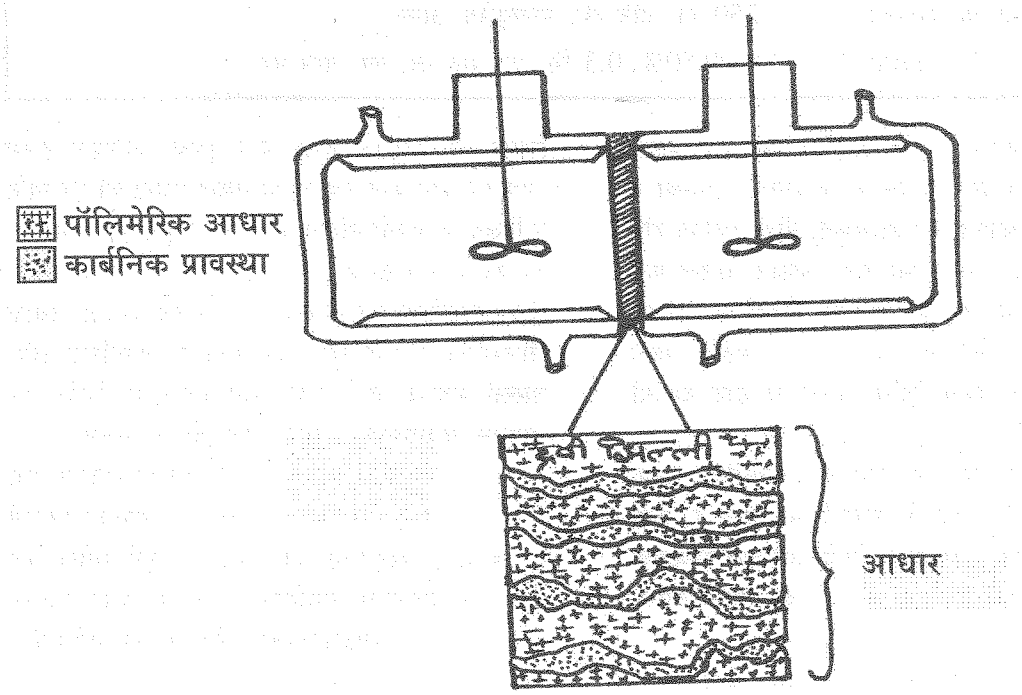

चित्र - 2 : आधारयुक्त द्रवी-झिल्ली

निष्कर्षक द्रव से प्रवाहित किया जाता है । इसी के समानांतर दूसरी ओर व्यारोधक प्लेट से पृथक, अपखंडक प्रावस्था के भी सूक्ष्म गोले गिराये जाते हैं । जैसे ही भरण प्रावस्था से आयन, स्थूल कार्बनिक प्रावस्था के संपर्क में आता है शीघ्र ही समान रूप से चयनात्मक ढंग से कार्बनिक में विसरित हो जाता है । व्यारोधक प्लेट के दूसरी ओर जहाँ आयनों का सांद्रण कम होता है फलस्वरूप अपनी उच्च से निम्न सांद्रता की ओर अभिगमित होता है तथा सूक्ष्म अपखंडक गोले में विसरित होकर नीचे पृथक कक्ष में एकत्रित हो जाता है । इसके विपरीत जिस

तालिका 2 :
पायस युक्त द्रवी-झिल्ली की सहायता से विस्कास फाइबर उद्योग से अपशिष्ट जल से जिंक का पृथक्करण

- लेनजिंग, ए. जी., आस्ट्रिया

बाह्य भरण प्रावस्था	:	200 मिग्रा. प्रति लि. Zn^{2+} 6 ग्रा. प्रति लि. सल्फ्यूरिक अम्ल में
झिल्ली प्रावस्था निष्कर्षक	:	डाई (2-इथाइल हेक्सिल) डाई थायो-फास्फोरिक अम्ल (डी. टी. पी. ए.) 5% भारात्मक
सर्फक्टैन्ट	:	ई. सी. ए. 11522 पॉलीएमीन, 3% भारात्मक
तनुकारक	:	शेलसॉल टी (पैराफिन) 62% भारात्मक
अपखंडक प्रावस्था	:	250 ग्रा. प्रति ली. सल्फ्यूरिक अम्ल
दक्षता	:	> 99.50%, 0.3 मि. ग्रा. प्रति लि. तक लाने पर

ओर भरण विलयन गिराया जाता है उस ओर आयन मुक्त भरण, परंतु दूसरे आयन जो कार्बनिक प्रावस्था में विसरित या निष्कर्षित नहीं हो सकते, नीचे एकत्रित होते जाते हैं। इस तंत्र में अभिगमित आयन गालक कम मात्रा में प्राप्त होने के कारण अभी औद्योगिक स्तर पर कम परंतु प्रयोगशाला स्तर पर बराबर की महत्ता रखता है। इसकी संपूर्ण क्रिया विधि चित्र-6 के द्वारा दर्शायी गयी है।

उपर्युक्त वर्णित सभी तंत्रों की उपयोगिता उसके द्वारा अभिगमित-गालक के ऊपर निर्भर होती है, तथा चयनात्मक प्रकृति, उसमें प्रयोग किये जाने वाले निष्कर्षक एवं कुछ अंश तक प्लास्टिक में छिद्र के द्वारा निर्धारित होती है।

पॉलिमेरिक परत के कुछ संघनित प्रावस्था में अपने कम झिल्ली-अभिगम्य-गालक तथा अत्यंत निम्न कोटि के चयनात्मक प्रवृत्ति जैसे न सुधार सकने वाले लक्षणों के कारण ज्यादा उपयोगी साबित नहीं हो सकी वहीं दूसरी ओर द्रवी-झिल्ली अपने उच्च-गालक एवं सुधारुचयनात्मक प्रवृत्ति के कारण अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है। इसके द्वारा निष्कर्षण में अपखंडक विलयन में विलेय की उच्च सांद्रता अभिगमन-युग्म की सहायता से प्राप्त की जा सकती है। जो इसके एक विशिष्ट लक्षण को प्रदर्शित करता है। इसके अतिरिक्त इसमें वाष्मित न होने वाले उत्क्रमणीय संकल एजेन्ट की उपस्थिति से विलेय के अपनी सांद्रता प्रवणता की पूर्ति हेतु अभिगमन को बढ़ावा मिलता है। तथा द्रव में उच्च विसरणता के कारण प्रमाणिक उच्च-गालक का उद्गमन होता है, जबकि पॉलिमेरिक में ऐसा नहीं पाया जाता है। कार्बनिक द्रवी-झिल्ली प्रावस्था में विशिष्ट आयनोफोर को विलेय कर अत्युत्तम चयनात्मक प्रवृत्ति प्राप्त की जा सकती है।

द्रवी-झिल्ली प्रचालन में निष्कर्षण-नियत एवं विसरण गुणांक दोनों अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि परट्रेक्शन का अभी भी पूर्ण रुपेण बड़े पैमान पर औद्योगिक-उपयोगिता बाकी है। कुछ पायलट संयंत्रों के संभाव्य सफलतापूर्वक परीक्षण किये गये एवं वे सुचारु रुप से चल रहे हैं।

विलायक निष्कर्षण के कुछ विशिष्ट लक्षण जैसे प्रावस्था-पृथक्करण, विलायक का अंतः रुकाव, गंभीर समस्या उत्पन्न कर देते हैं वहीं दूसरी ओर विलायक के कम मात्रा में प्रयोग तथा उपर्युक्त दोषों से द्रवी-झिल्ली तंत्र मुक्त होती है। इसकी एक विशेषता है कि अगर विलयन में कुछ सूक्ष्म ठोस उपस्थित हैं, उनका भी उपचार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसमें कम पूंजी निवेश तथा कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

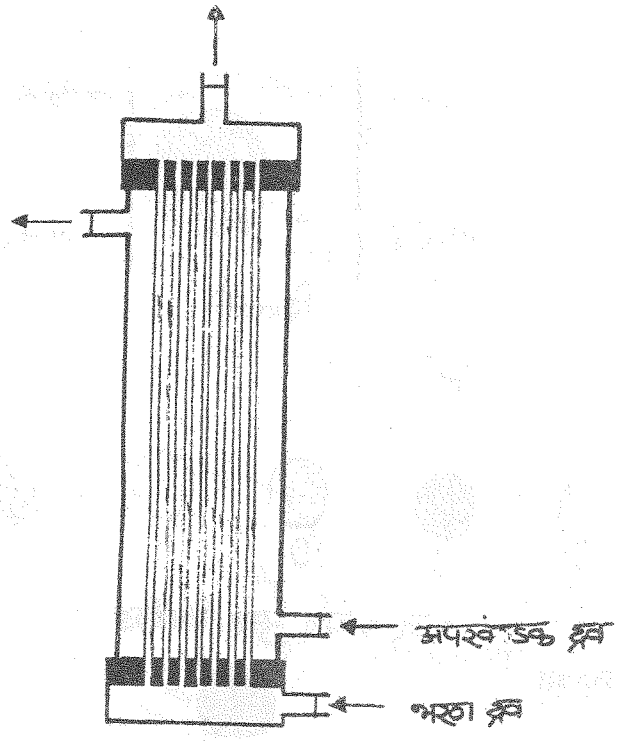

चित्र - 3 : खोखली तंतु द्रवी-झिल्ली तंत्र

इस विधि में पुनुरुत्पादित एवं पूर्वानुमानित निष्पाद प्राप्त किया जा सकता है । यह एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा विषैले तत्त्वों को अपशिष्ट जल से आसानी से निष्कासित कर सकते हैं तथा किफायती ढंग से इन तत्त्वों को झिल्ली की दूसरी ओर सांद्रित किया जा सकता है ।

अनुसंधान से पता चला है कि आधार युक्त खोखले तंतु द्रवी-झिल्ली की सहायता से सूक्ष्म मात्रा में यूरेनियम सफलतापूर्वक संदूषित भूमिगत जल से प्राप्त किया गया है । आधारयुक्त द्रवी-झिल्ली के दूसरे पहलू में कैरियर या वाहक का प्रभाव एवं तनुकारक के परट्रैक्शन का विस्तृत परीक्षण किया गया ।

पायसयुक्त द्रवी-झिल्ली के औद्योगिक संयंत्र अपनी अच्छी क्षमता के साथ प्रचालित अवस्था में कार्यरत हैं

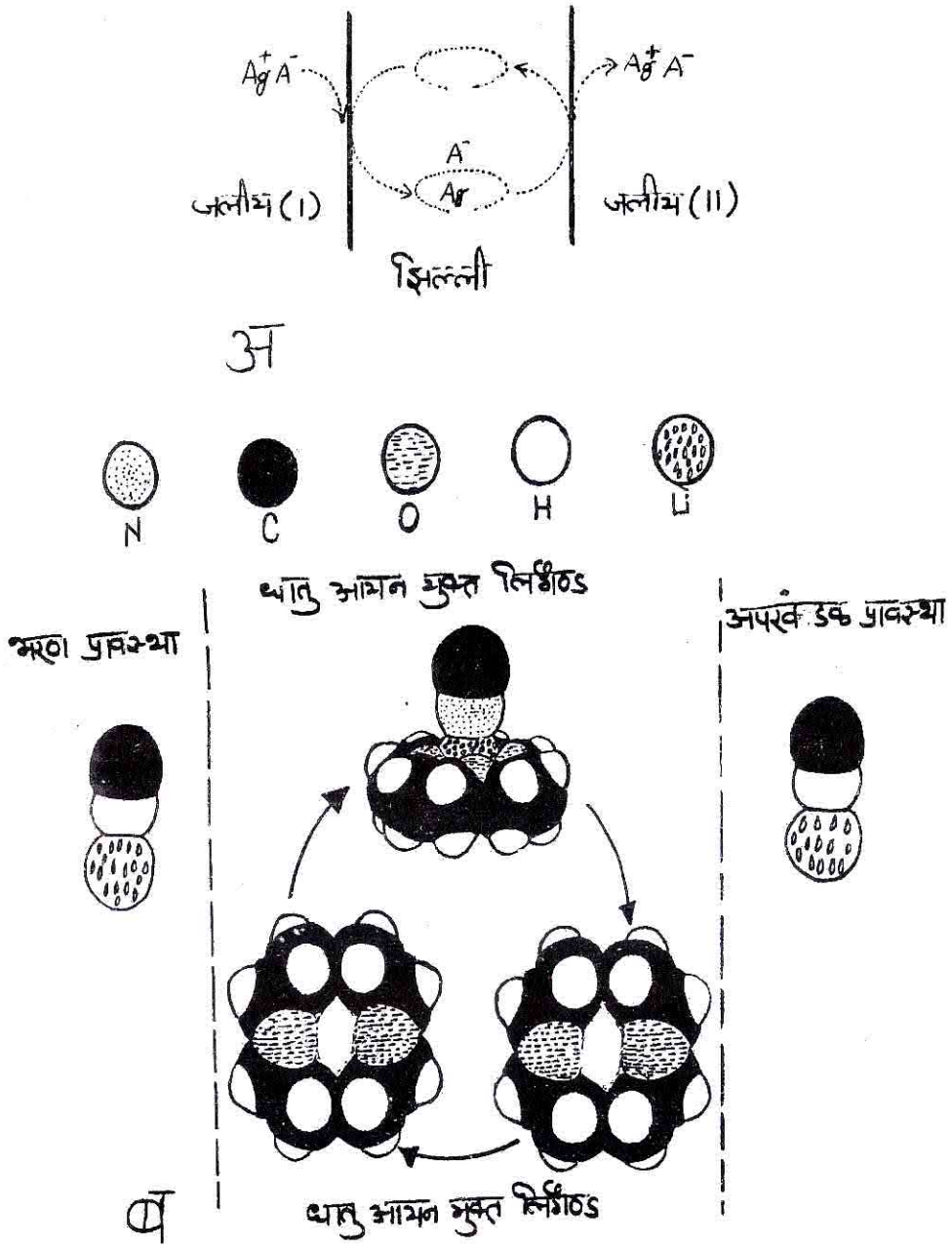

चित्र - 4 : (अ) Ag आयन चयनात्मक द्रवी-झिल्ली (ब) Li आयन पारगमन प्रक्रिया

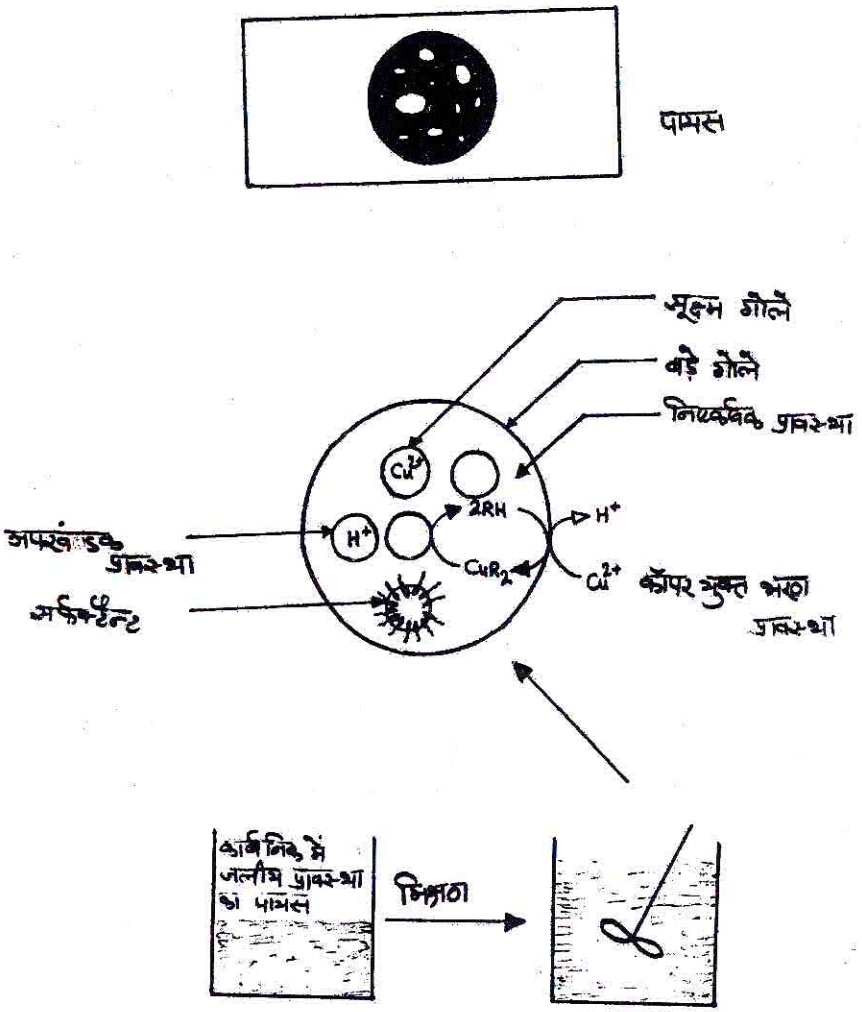

चित्र - 5 : पायस युक्त द्रवी-झिल्ली

जिससे प्लैटिनम समूह के तत्त्वों का निष्कर्षण किया जाता है।

आधारयुक्त द्रवी-झिल्ली के अच्छे गुणों के साथ-साथ दो मुख्य ऐसे दोष भी हैं जो इस तंत्र के प्रचालन में समस्या खड़ी करते हैं। प्रथम, विलायक ह्रास जो कि मुख्यतः वाष्पीकरण, घुलनशीलता या दाबांतर के कारण आधार संरचना-छिद्र से बाहर की ओर धकेलने से होता है। द्वितीय, दाबांतर के कारण द्रव को संरचना-छिद्र से हो कर बहाव को अग्रसित करता है, जिससे वाहक लीच होता जाता है। ऐसा होने के कारण निम्न परट्रेक्शन

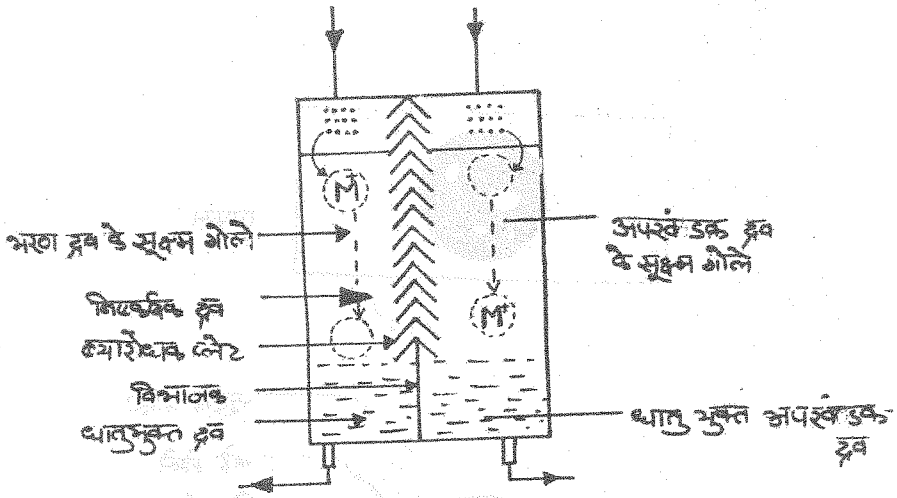

चित्र - 6 : पायस युक्त द्रवी-झिल्ली तंत्र

तथा दूर न कर सकनेवाले ह्रास या वाहक/ झिल्ली से घुलने के कारण विलायक का पॉलिमर आधार से छूटना लगभग नगण्य दोष हैं। इस कारण झिल्ली को समय-समय पर उपचार की आवश्यकता पड़ती है जिसके द्वारा झिल्ली के विलायक ह्रास की पूर्ति की जा सकती है। इस तरह के तुच्छ दोषों से मुक्त करने के लिए द्रवी-झिल्ली के प्रारूप को एक श्रेणी में लगाकर भी अच्छे पृथक्करण निष्पाद प्राप्त किये जा सकते हैं।

द्रवी-झिल्ली की प्रायोगिकता में एक बड़ा दोष अस्थायी अचल आधार को माना जा सकता है। यहां कुछ निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं जिनके द्वारा द्रवी-झिल्ली की आयु को बढ़ाया जा सकता है एवं दोषों से मुक्त कर सकते हैं जैसे :

- सूक्ष्म छिद्र-त्रिज्या तथा अधिकतम रंध्र युक्त आधार के प्रयोग से।
- उच्च कार्बनिक / जल अंतरा-पृष्ठीय-तनाव युक्त वाहक के उपयोग से।
- सम-परासरणीय स्रोत तथा ग्राही-प्रावस्था के उपयोग करने से।

इस तरह परट्रैक्शन पूर्ण रूपेण जल धातु-कर्मी में जहाँ धातु या विलेय को पुनः प्राप्ति या पृथक करना होता है, के क्षेत्र में सफल उपयोगी सिद्ध हो रहा है एवं हमारे समक्ष विलायक-निष्कर्षण के वैकल्पिक तकनीक के रूप में उपलब्ध है।

❐❐❐

विश्व स्थिति निर्धारण तंत्र

काली शंकर
डी- 6, मल्टीस्टोरी फ्लैट्स,
पंडारा पार्क, नयी दिल्ली - 110 003

पृथ्वी की सतह पर स्थित किसी भी बिंदु की स्थिति एवं दिशा निर्धारण मानव के प्रादुर्भाव से ही होता रहा है। मानव अपने ज्ञान, सामर्थ्य एवं सुविधानुसार सृष्टि में व्याप्त मानकों का उपयोग कर अपनी एवं अन्य बिंदुओं की स्थिति एवं दिशा का ज्ञान प्राप्त करता रहा है। दशकों से प्रयुक्त ध्रुव तारे एवं कंपास का अस्तित्व आज खतरे में नजर आ रहा है। आधुनिक विज्ञान की सहायता से नव विकसित क्रांतिकारी विश्व स्थिति निर्धारण यंत्र की स्थिति गणना की शुद्धता ने उसे एक अत्यंत उपयोगी तंत्र स्थापित किया है। तंत्र की वैज्ञानिक जानकारी एवं महत्वपूर्ण उपयोग इस लेख में प्रस्तुत हैं।

पृथ्वी की सतह पर किसी बिंदु को पूर्ण रूपेण परिभाषित करने के लिए अथवा पृथ्वी में किसी भी बिंदु पर अपनी स्थिति जानने के लिए तीन गणकों की आवश्यकता होती है तथा ये गणक है - अक्षांश, देशांतर और उस बिंदु की औसत समुद्र स्तर से ऊँचाई। कई दशक पहले इस कार्य के लिए पारंपरिक सर्वेक्षण तरीकों, ध्रुव तारों और चुंबकीय कंपासों का प्रयोग किया जाता रहा है लेकिन इन तरीकों की शुद्धता इतनी अच्छी नही रही। इसके अतिरिक्त अगर स्थिति निर्धारण और दिशा निर्धारण में नक्षत्रों और ध्रुव तारे का प्रयोग किया जाना है तो वह तभी संभव हो पाता था जब आसमान साफ हो तथा आकाश में बादल न हो। लेकिन आज पृथ्वी की किसी सतह पर शुद्धता से स्थिति निर्धारण के लिए प्रयुक्त विश्व स्थिति निर्धारण तंत्र (ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम-जीपीएस) एक बहुत महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी विकास है तथा इसके नये नये उपयोग लगातार खोजे जा रहे हैं।

जीपीएस तंत्र के तीन मुख्य अवयव हैं - अंतरिक्ष खंड, नियंत्रण खंड और उपभोक्ता खंड। अंतरिक्ष खंड में 24 उपग्रह हैं तथा प्रत्येक उपग्रह पृथ्वी से 11,000 नॉटिकल मील की दूरी पर है। उपभोक्ता खंड में अभिग्राहक या रिसीवर होता है जो एक हाथ से पकड़ा जा सकता है तथा इसे कार में भी लगाया जा सकता है। नियंत्रण खंड में 5 भू उपग्रह केंद्र आते हैं तथा ये दुनिया में विभिन्न स्थानों पर स्थित हैं। ये भू उपग्रह केंद्र इस बात का लगातार मानीटरन करते रहते हैं कि जीपीएस तंत्र के उपग्रह ठीक से काम कर रहे हैं। जीपीएस तंत्र किसी भी बिंदु की पृथ्वी पर स्थिति 300 फुट की शुद्धता से बता सकता है।

अंतरिक्ष खंड :

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, जीपीएस तंत्र में 24 उपग्रह हैं जो पृथ्वी से 11,000 नॉटिकल मील की दूरी पर स्थित हैं तथा प्रत्येक उपग्रह 12 घंटे में पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है। इन उपग्रहों की अंतरिक्ष में स्थापना इस प्रकार की गयी है कि पृथ्वी के किसी भी बिंदु से एक समय में 6 उपग्रह अवश्य दृष्टिगोचर होंगे। पृथ्वी में किसी बिंदु की शुद्धतम रूप से स्थिति निर्धारण के लिए यह आवश्यक है कि जीपीएस तंत्र के अधिक से अधिक उपग्रहों से सिगनल प्राप्त हो। इसी स्थिति निर्धारण की शुद्धता को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक जीपीएस उपग्रह 0.000000003 सेकंड तक की शुद्धता वाले समय संकेत पृथ्वी की ओर

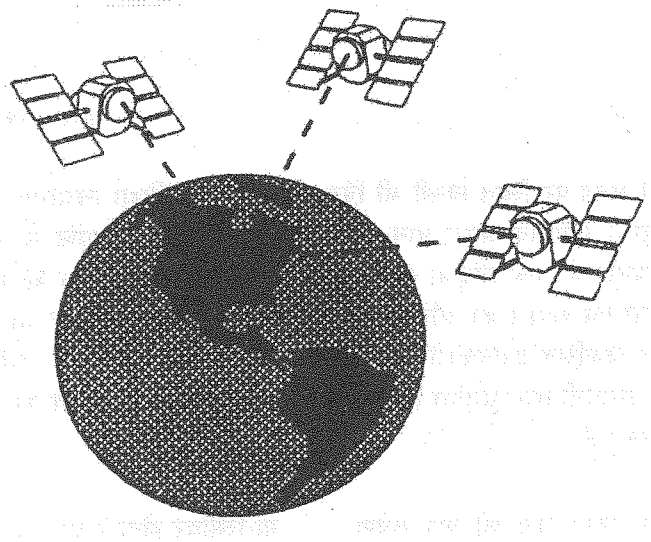

चित्र - 1 : ग्लोबल स्थिति निर्धारण तंत्र (जीपीएस)

प्रेषण करता है । जीपीएस अभिग्राहक से रिसीवर तक जाने में लगा समय अतिशुद्धता से मापा जा सका है । रिसीवर इस सूचना का उपयोग अपनी स्थिति का, शुद्धता से पता लगाने और गणना करने के लिए प्रयोग करता है ।

जीपीएस तंत्र के प्रथम उपग्रह का प्रमोचन 1978 में किया गया था । ब्लाक-I श्रेणी में प्रथम 10 उपग्रह तथा ब्लाक-II श्रेणी में 1989 से 1993 तक 23 उपग्रहों का उत्पादन किया गया तथा इनको अंतरिक्ष में स्थापित किया गया । 1994 में जीपीएस तंत्र के 24 वें उपग्रह के प्रमोचन के साथ ही जीपीएस तंत्र के अंतरिक्ष स्थापन का कार्य पूरा हो गया ।

नियंत्रण खंड :

जीपीएस उपग्रहों का प्रधान नियंत्रण केंद्र तथा मानीटरन नेटवर्क कोलोरैडो में स्थित है । ये उपग्रहों से भेजे जानेवाले सिगनलों का मानीटरन करते हैं तथा इसके आधार पर प्रत्येक उपग्रह के कक्षीय आंकड़ों का शुद्धतापूर्ण विश्लेषण करते हैं तथा समय सिगनल की शुद्धता को बनाये रखते हैं और आवश्यकतानुसार संशोधन कमांड सिगनल भेजते रहते हैं ।

उपभोक्ता खंड :

जीपीएस उपभोक्ता खंड में जीपीएस रिसीवर और उपभोक्ता आते हैं । जीपीएस रिसीवर जीपीएस उपग्रहों से प्राप्त सिगनलों को स्थिति, गति और समय गणकों में बदलता है । 4-आयामी सूचना यानी x, y, z तथा समय के लिए चार उपग्रहों से प्राप्त सिगनलों की आवश्यकता पड़ती है । जी पी एस रिसीवरों का प्रयोग नौ संचालन, स्थिति निर्धारण, समय निर्धारण और अन्य प्रकार के अनुसंधानों के लिए किया जाता है । स्थिति निर्धारण के वृहद् उपयोगों में सर्वेक्षण, भू गणितीय नियंत्रण इत्यादि शामिल हैं । समय निर्धारण क्षमता (जो इस तंत्र में निहित है) के द्वारा खगोलिकीय प्रेक्षण, दूर संचार सुविधाओं और प्रयोगशाला मानकों के निर्धारण में सहायता मिलती है । जीपीएस सिगनलों के अनुसंधानात्मक उपयोगों में वायुमंडलीय गणकों का मापन शामिल है ।

उपग्रहों का सबसे जटिल अवयव-सीजियम बीम मानक :

उपग्रहों का सबसे जटिल अवयव उपग्रहों में लगे हुए परमाण्वीय दोलित्र हैं जिनमें रूबीडियम के सेल तथा सीजियम किरण मानक शामिल हैं। जीपीएस तंत्र के द्वारा भौगोलिक स्थिति का जिस शुद्धता से पता किया जाता है उसका श्रेय इन्हीं दोलित्रों को जाता है। इन दोलित्रों का आवृत्ति स्थायित्व बहुत उच्च कोटि का होता है। इन दोलित्रों में एक लाख वर्ष में केवल एक सेकंड की त्रुटि हो सकती है। इन दोलित्रों के द्वारा उपग्रहों के बीच जटिल समय समाकलन स्थापित किया जाता है तथा इसके द्वारा रेंजिग में भी सहायता ली जाती है।

उपर्युक्त भूमिका के साथ जीपीएस तंत्र के काम करने के तरीके को आसानी से समझा जा सकता है। जीपीएस तंत्र के कार्य करने के सिद्धांत के पीछे अभिग्राहक और उपग्रहों के बीच दूरी मापन (या रेंज) की प्रक्रिया की मुख्य भूमिका है। उपग्रह भी कक्षा में अपनी स्थिति की शुद्धता पूर्ण तरीके से सूचना देते हैं। अगर पृथ्वी पर हम अपनी स्थिति से अंतरिक्ष में स्थित उपग्रह की शुद्धता पूर्ण दूरी जानते हैं तो हम इस बात का अनुमान लगा सकते हैं कि हम कहीं पर एक काल्पनिक गोले की सतह पर स्थित है जिसका अर्धव्यास हमसे उपग्रह की दूरी के बराबर है। अगर हमें अपनी स्थिति से दो उपग्रहों की दूरी मालूम है तो इसका मतलब यह हुआ कि हम किसी एक रेखा पर स्थित हैं जहाँ दो गोले (स्फीयर) एक दूसरे को काटते (इन्टरसेक्ट करते) हैं। अब अगर हम इस संदर्भ में एक तीसरे उपग्रह से भी अपनी दूरी का मापन करते हैं तब उस हालत में केवल दो ही संभावित स्थितियाँ हो सकती हैं जहाँ पर हम स्थित है। इनमें से एक संभावना प्राय: असंभव होती हैं तथा दूसरी सही होती है और जीपीएस अभिग्राहक के पास ऐसे गणित के तरीके होते हैं कि वह असंभव स्थिति को नकार देता है तथा संभव स्थिति का चयन करता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो गया कि जीपीएस तंत्र उपग्रहों का प्रयोग करता है तथा इन उपग्रहों के मार्गों का मानीटरन पृथ्वी में स्थित अभिग्राहकों के द्वारा किया जाता है। प्रत्येक उपग्रह रेडियो सिगनल पृथ्वी की ओर भेजता है तथा इस रेडियो सिगनल को प्राप्त करके एक अभिग्राहक उपग्रह की स्थिति तथा उपग्रह और अभिग्राहक के बीच दूरी की गणना करता है। इन गणकों के द्वारा अभिग्राहक पृथ्वी की सतह पर अपनी स्थिति का पता करने के लिए गणना करता है।

दैनिक जीवन में जीपीएस का कैसे प्रयोग किया जाता है ?

जीपीएस तंत्र की क्षमताएँ अनेक है। साथ ही साथ उसके तरह तरह के उपयोगों को पता करने की दिशा में अनेकों प्रयास किये जा रहे हैं। जीपीएस तंत्र का प्रयोग वायुयानों तथा समुद्री जहाजों में बहुतायत से किया जा रहा है। मोटर गाड़ियों की ट्रैकिंग, सार्वजनिक परिवहन विभागों, सामान ढ़ोनेवाले ट्रकों, कोरियर सेवाओं, अग्नि शामक गाड़ियों, आपातकालीन सेवाओं आदि में इस तंत्र का उपयोग किया जा सकता है।

आज विदेशों में मोटर कार निर्माता जीपीएस अभिग्राहक तंत्र निर्देशित गतिशील मानचित्रों को प्रदर्शित करने वाली मोटर गाड़ियों का निर्माण विकल्प के तौर पर कर रहे है। अमरीका में किराये पर कार देनेवाली अनेक कंपनियां जीपीएस रिसीवर लगी हुई कारों का प्रदर्शन करती हैं। मान चित्रण और सर्वेक्षण कंपनियाँ भी जीपीएस तंत्र का अधिक से अधिक प्रयोग कर रही हैं। वन्य जीवन तथा लुप्त हो रहे अनेक जंगली जीवों की रक्षा और बचाव कार्यों हेतु अमरीका के मोजावे रेगिस्तान में कछुओं में जीपीएस अभिग्राहक और ट्रान्समिटर लगाकर रखे गये हैं तथा इससे वन्य जीवों की जनसंख्या के विषय में अनुमान लगाया जा सकता है। जीपीएस अभिग्राहकों से लैस गुब्बारों की मदद से वायुमंडल में ओजोन छिद्र का भी मानीटरन किया जा रहा है। इसके साथ ही वायुमंडल में वायु की गुणवत्ता का पता करने में भी जीपीएस तंत्र उपयोगी पाया गया है। समुद्र में तेल का पता लगाने में भी जीपीएस तंत्र की सहायता ली जा रही है। पुरातत्ववेत्ता तथा अन्वेषक भी इसका उपयोग कर रहे

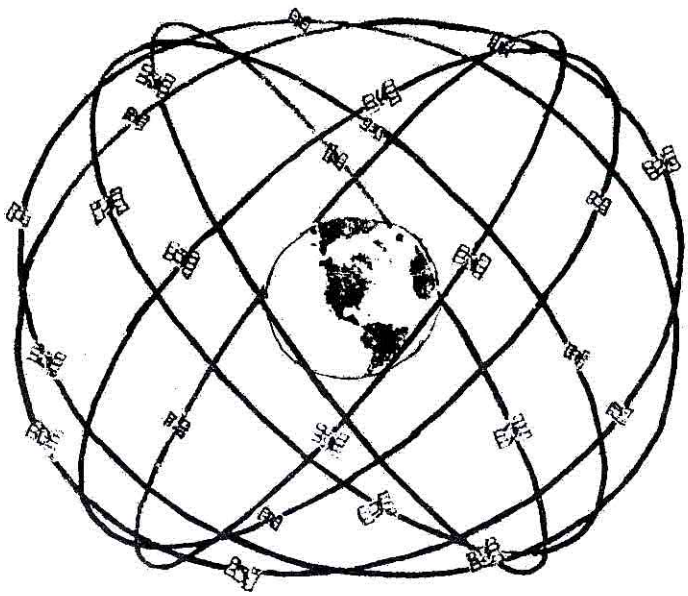

चित्र - 2 : जीपीएस उपग्रह के 24 उपग्रह (6 कक्षीय प्लेनों में), प्रत्येक प्लेन में 4 उपग्रह हैं । उपग्रहों की पृथ्वी से दूरी 20200 किमी., 55^0 झुकाव

हैं । एक जीपीएस रिसीवर तथा गणित और विज्ञान के मामूली ज्ञान के साथ आप अपने गंतव्य स्थान से भटक जाने की स्थिति में वांछित मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं ।

यहाँ पर जीपीएस का एक बहुत ही कौतूहल पूर्ण उपयोग दिया जा रहा है । इंगलिश चैनेल के नीचे सुरंग बनाने के दौरान ब्रिटेन और फ्रान्स की टीमों ने विपरीत दिशाओं से खुदाई का कार्य चालू किया । ब्रिटेन की टीम ने डोवर साइड से तथा फ्रान्स की टीम ने कैलेस साइड से खुदाई शुरू की । इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कि खुदाई के बाद दोनों टीमें बीच में एक ही बिंदु पर मिलती हैं, दोनों टीमों ने जीपीएस रिसीवरों का उपयोग किया । अगर जीपीएस तंत्र का उपयोग न करते तो हो सकता है कि सुरंग की सीधान न मिलती तथा खुदाई करते-करते वे बीच के बिंदु पर न मिलते ।

इस प्रकार जीपीएस का भविष्य उतना ही असीमित है जितनी हमारी कल्पना शक्ति । तकनीकी के विकास के साथ जीपीएस तंत्र के उपयोगों में और भी अधिक वृद्धि होने की आशा लगायी जा रही है । हाथ में पकड़े हुए आकाश के नक्षत्रों और तारों की भांति जीपीएस उपग्रह 21 वीं सदी के प्रवेश में मार्गदर्शक की भूमिका निभायेंगे । जीपीएस उपग्रह पृथ्वी की ओर केंद्रित सिगनल भेजते हैं जिसे प्राप्त करके जीपीएस रिसीवर अपनी स्थिति का पता करते हैं । चार जीपीएस उपग्रहों से प्राप्त सिगनल पृथ्वी में किसी स्थान की 3-आयामी स्थिति पता कर सकते हैं । उपग्रहों की संख्या प्राय: 24 से ज्यादा होती है क्योंकि जो उपग्रह खराब हो जाते हैं उन्हें तुरंत बदल दिया जाता है । उपग्रहों की कक्षाएँ प्रत्येक दिन एक बार उसी ग्राउंड ट्रैक की पुनरावृत्ति करती हैं । इसीलिए कक्षीय ऊंचाई इस प्रकार रखी जाती है जिससे उपग्रह 24 घंटे में उसी ट्रैक और अभिविन्यास की पुनरावृत्ति करें । उपग्रह जिन जिन कक्षीय प्लेनों में घूमते हैं व एक दूसरे से 60^0 की दूरी पर होते हैं तथा इन प्लेनों का पृथ्वी की भूमध्य रेखा पर झुकाव 55^0 का होता है । जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि पृथ्वी के किसी भी

स्थान से 5 या 6 उपग्रह हर समय दृष्टि गोचर होते हैं।

उपग्रहों के द्वारा प्रेषित आवृत्तियाँ और कोड :

जीपीएस उपग्रह दो प्रकार के माइक्रोवेव सिगनलों का प्रेषण करते हैं। पहली आवृत्ति (एल-1) 1575.4 MHz पर होती है तथा इसमें नौसंचालक संदेश और विशिष्ट स्थिति निर्धारण सिगनल कोड होते हैं। दूसरी आवृत्ति (एल-2) 1227.60 MHz पर होती है तथा इसका उपयोग आयनमंडल में होनेवाले सिगनल विलंब को परिशुद्ध स्थिति निर्धारण अभिग्राहकों के द्वारा मापा जाता है ।

अंतरीय (डिफरेन्शियल) जीपीएस तंत्र :

जीपीएस तंत्र के बाहुल्य उपयोगों के लिए 100 मीटर की शुद्धता काफी हद तक पर्याप्त होती है लेकिन उन परिस्थितियों में जहाँ उससे भी अधिक शुद्धाता की आवश्यकता होती है वहाँ के लिए अंतरीय जीपीएस तंत्र का प्रयोग किया जाता है। अंतरीय जीपीएस तंत्र एक निर्धारित बिंदु पर (जिसे नियंत्रण बिंदु भी कहते हैं) एक जीपीएस अभिग्राहक का प्रयोग करता है। इस बिंदु की पृथ्वी पर शुद्धता पूर्ण तरीके से स्थिति ज्ञात होती है। इस ज्ञात बिंदु से जीपीएस तंत्र के सभी उपग्रहों से दूरियाँ मापी जाती हैं तथा इन कंप्यूटरीकृत दूरियों की ज्ञात दूरियों से तुलना की जाती है जिसका मुख्य उद्देश्य उस ज्ञात बिंदु से प्रत्येक दिखने वाले उपग्रह की दूरी का संशोधन पता किया जाता है। इन संशोधनों को जीपीएस उपग्रह अंतरीय रेडियो बीकनों के माध्यम से प्रत्येक नियंत्रण बिंदु के लिए प्रसारित करते हैं। इन संशोधनों को जीपीएस के अंतरीय रेडियो बीकन अभिग्राहक प्राप्त करते हैं तथा इन माडुलित सिगनलों को डिमाडुलित करके उन्हें सामान्य जीपीएस अभिग्राहकों को भेज देते हैं। ये जीपीएस अभिग्राहक इन संशोधनों को उपग्रहों से प्राप्त डाटा पर इन संशोधनों का अमल करते हैं। इस प्रकार वे स्थिति निधारण की शुद्धता को बढ़ाते हैं।

जीपीएस तंत्र में निम्न प्रकार की त्रुटियाँ आ सकती हैं जो स्थिति निर्धारण की शुद्धता को कम करती हैं। ये त्रुटियाँ जीपीएस तंत्र में आयमंडलीय संचरण विलंबन, क्षोभमंडलीय संचरण विलंबन, बहुमार्गीय सिगनल विचरण, उपग्रह स्थिति, उपग्रह की घड़ियों का विस्थापन, अभिग्राहक की घड़ियों की ड्रिफ्ट, अभिग्राहक का अवांछनीय एवं जीपीएस तंत्र की त्रुटियाँ।

नौ संचालन के क्षेत्र में भौगोलिक स्थिति की एक बड़ी अहम् भूमिका है और जीपीएस तंत्र इस कार्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। विश्व की परिवहन गतिविधियाँ और विशेषकर हवाई परिवहन के क्षेत्र में हुए महान विस्तार ने नौसंचालन को और भी अधिक उच्च कोटि का स्वरूप देने के लिए बाध्य किया है। पेट्रोल और ईंधन की बढ़ती कीमतों ने नौसंचालन के और भी अधिक विकसित तरीकों पर बल दिया है। ईंधन की बढ़ती कीमतें इस बात पर जोर देती हैं कि उच्चतम ट्रैफिक के क्षणों में भी हवाई जहाज ऐसे वायुमार्गों का अनुसरण करें जो दूरी की दृष्टि से सबसे कम दूरी वाले हों।

❐❐❐

'वैज्ञानिक' आपकी अपनी पत्रिका है। हम चाहते हैं कि पाठकों को उनकी रुचि की सामग्री मिले। आपको किस तरह के विषय पसंद आते हैं ? इसके अलावा भी आप पत्रिका में कुछ और परिवर्तन चाहते हैं ? आपके सुझाव आमंत्रित हैं। पाठकों की सक्रिय भागीदारी पत्रिका के स्वरूप परिवर्तन के लिए मार्गदर्शक होगी। आपकी प्रतिक्रिया / पत्रों की हमें हमेशा प्रतीक्षा रहती है।

- संपादक

विज्ञान और धर्म के बीच एक मज़बूत सेतु - पोप जॉन पॉल द्वितीय

डॉ. देवकी नंदन,
ए-304, हृषीकेश, स्वामी समर्थ नगर,
अंधेरी (प.), मुंबई - 400 053

यों तो किसी भी धर्म में धार्मिक कट्टरवादिता का रूप सदा से रहा है। प्रचलित मान्यता एवं आस्था पर किसी तरह की चोट या चुनौती देने का कोई भी प्रयास धर्म के ठेकेदारों को कभी स्वीकार नहीं है। यही कारण है कि जब जब किसी वैज्ञानिक अथवा दार्शनिक ने अपने ज्ञान एवं तर्क के आधार पर प्रचलित मान्यताओं को जरा सी भी चुनौती दी तब तब धर्मांधता का एक बबन्डर सा खड़ा हो गया और धर्म के इन्हीं ठेकेदारों ने उस वैज्ञानिक को मान्यताओं को तोड़ने के अपराध में भयंकर रूप से प्रताड़ित एवं अपमानित किया है। धार्मिक कट्टरवादिता के इस रूप में ईसाई धर्म भी कोई अपवाद नहीं है। पर आज के धर्मगुरु वैटिकन शहर के सहिष्णु, निष्पक्ष जॉन पॉल द्वितीय ने अपने विवेक का परिचय देकर वैज्ञानिकों के प्रति चर्च द्वारा किये गये सभी कृत्यों पर खेद प्रकट कर अत्यंत साहस का परिचय दिया है।

1848 में पोलैंड के जाने-माने कवि जूलियस स्लोवॅकी ने अपनी एक कविता में लिखा था -

"वो देखो, आ रहा है स्लॉविक पोप. . .
जिसे है जन-जन का ख़याल
जो है सच में विश्वबंधु . . ."

हालांकि यह कविता महज कविता यानी कवि के मन की कल्पना तथा आकांक्षा भर थी, पर समय का फेर देखिए कि इस भविष्यदृष्टा कवि की कल्पना 1978 में सचमुच साकार हो गयी। जी हाँ, पोलैंड में जन्मा सामान्य सा दिखनेवाला एक पुरुष अपनी असामान्य प्रतिभा, निष्ठा, धार्मिक सहिष्णुता, विवेक और अद्वितीय विज्ञान दृष्टि से पोप बन गया और कहलाया पोप जॉन पॉल-द्वितीय। 100 करोड़ से ज्यादा कैथोलिक ईसाइयों का यह धर्मगुरु आज भी अपने अद्‌भुत आचरण से न सिर्फ़ वैटिकन पर राज कर रहा है, बल्कि अपने अत्यंत बहादुर निर्णयों की बदौलत विश्व के समूचे समाज में भी बहुत ही लोकप्रिय हो गया है। संसार भर के वैज्ञानिक भी आज हर्षभरे विस्मय के संग महसूस कर रहे हैं कि ऐसे अद्‌भुत निर्णय लेनेवाला पोप सदियों के बाद वैटिकन आ पहुँचा है।

पर आख़िर जॉन पॉल-द्वितीय ने ऐसा क्या कहा या किया है कि विज्ञान जगत आज उनसे इतना खुश है? 1992 तथा फिर 1996 में पोप ने दो ऐतिहासिक घोषणाएं कीं और उन्हें अमल में लाये। ये घोषणाएं विश्वविख्यात वैज्ञानिकों गैलीलियो तथा डारविन के सिलसिले में थीं। पोप ने कहा कि बरसों पहले जो वैज्ञानिक सिद्धांत इन वैज्ञानिकों ने प्रस्तुत किये, वे बहुत ही सार्थक और सही सिद्ध हुए हैं। पर तब चर्च ने इन्हें समझने में बड़ी भूल की और इन वैज्ञानिकों को इस भूल के फलस्वरूप शारीरिक अथवा मानसिक यंत्रणाएं झेलनी पड़ीं। पोप ने आगे कहा कि चर्च आज इस भूल को न सिर्फ़ महसूस करता है बल्कि इसे खुल्लमखुल्ला स्वीकार भी करना चाहता है। साथ ही इन वैज्ञानिकों को फिर से सम्मानसहित प्रतिष्ठित करता है। इन घोषणाओं के बाद पोप ने चर्च द्वारा ऐसे आयोजन कराये जिनसे प्रायश्चित की रस्में पूरी की गयीं। पोप ने फिर इस आशय के पत्र 'पॉंटिफिकल अकादमी ऑफ़ साइंसेज़' को भी भेजे ताकि इस प्रायश्चित की सनद रहे।

बेचारा गैलीलियो गैलिली:

15 फरवरी 1564 को इटली के पीसा शहर में जन्मा गैलीलियो गैलिली अपने क्रांतिकारी आविष्कारों के कारण आज भी सारे संसार में गैलीलियो नाम से मशहूर है। बचपन से ही उसे भौतिकशास्त्र व गणित में अत्यंत रुचि थी। आर्किमिडीज़, यूक्लिड, कैप्लर, अरस्तु सभी को वह रुचि से पढ़ता और अपने ज्ञान व प्रेक्षण के तराजू पर तौलता था। गिरजाघर में झूलते लैंप को देखकर और अपनी नाड़ी के इस्तेमाल से उसने सिद्ध किया कि पेंडुलम को एक तरफ़ से दूसरी तरफ जाने और लौटने में जो समय लगता है, वह एक बराबर रहता है चाहे यह चक्कर छोटा हो या बड़ा। उसका प्रस्ताव था कि इस दोलन-काल को समय की एक इकाई माना जाये। इसी तरह के कई प्रयोग कर गैलीलियो ने काफ़ी ख्याति अर्जित कर ली। तरल-पदार्थों में बहाव संबंधी अध्ययन, ठोस पदार्थों में गुरुत्वाकर्षण केंद्र की पहचान आदि के अलावा इनमें गैलीलियो का 'इन्क्लाइंड प्लेन एक्सपेरीमेंट' भी शामिल है। इस प्रयोग के दौरान गैलीलियो ने पीसा की मीनार पर खड़े होकर एक ही ऊँचाई से अलग-अलग भार की चीजें गिरायीं और अरस्तु के इस वक्तव्य को गलत सिद्ध कर दिया कि ये चीज़ें अलग-अलग समयों पर धरती पर पहुँचती हैं। 1607 में गैलीलियो ने दूरबीन की खोज करके मंगल, ब्रहस्पति और शनि ग्रहों के रोमांचक अध्ययन किये।

इन वैज्ञानिक प्रयासों से गैलीलियो को बहुत ख्याति मिली। उसका उत्साह बहुत बढ़ गया ... दरअसल इतना ज्यादा कि चर्च की परवाह किये बिना एक लेख लिखकर उसने कॉपर्निकस का समर्थन कर डाला। उसने अपने प्रयोगों व दूरबीन आदि उपकरणों से ऐसे अकाट्य तर्क इस तथ्य के समर्थन में जुटा लिये कि पृथ्वी सहित सभी ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। यही तो कॉपर्निकस ने भी कहा था मगर सिर्फ़ तर्क के आधार पर। पर चर्च गैलीलियो के प्रयोगों को भी स्वीकार करने को तैयार न था। उसका मुख्य कारण यह था कि ईसाई धर्म की उन दिनों की मान्यताओं के अनुसार पृथ्वी को इस ब्रह्मांड का केंद्र माना जाता था। अत: धर्म के अनुसार, सूर्य व अन्य ग्रह पृथ्वी की परिक्रमा करते हैं, यही प्रचारित किया जाता था व स्कूलों में पढ़ाया भी जाता था। इतना ही नहीं, ईसाई धर्म का शिकंजा समाज की हर गतिविधि पर इतना ज्यादा कसा था कि इसकी मान्यताओं का विरोध करने का नतीजा मृत्युदंड भी हो सकता था। गैलीलियो ने खुद देखा था कि चर्च का विरोध करने पर एक धर्मशास्त्री ज्यादातर ब्रूनो को जिंदा जलाकर मृत्युदंड दिया गया था। ब्रूनो भी कॉपर्निकस का ही समर्थन कर रहा था।

गैलीलियो की ख्याति और लोकप्रियता को देखते हुए उसे तत्काल तो कोई दंड नहीं दिया गया पर प्रमुख धर्मविज्ञानी रॉबर्ट ने 5 मार्च 1616 को आदेश निकाला कि कॉपर्निकस से जुड़े संपूर्ण साहित्य पर प्रतिबंध लगाया जा रहा है। इस फतवे के बाद गैलीलियो को 'ऊटपटांग' न बोलने की सख्त ताकीद कर दी गयी। 1624 में गैलीलियो ने रोम जाकर यह प्रतिबंध हटवाने की कोशिश की, पर नतीजे में उसे पोप ने सलाह दी कि मनुष्य को यह अधिकार नहीं कि वह चर्च के ज्ञान को चुनौती दे, गैलीलियो का मन आक्रोश से भर उठा। वह वापस फ्लोरेंस गया और उसने एक पुस्तक लिखी। 1632 में "डायलॉग्स कन्सर्निंग द टू चीफ़ वर्ल्ड सिस्टम्स-टोलेमिक एंड कॉपर्निकस" शीर्षक वाली इस पुस्तक के छपते ही यूरोप में मानो आंधी सी आ गयी। एक तरफ जन-जन में गैलीलियो लोकप्रिय हो गया तो दूसरी ओर धर्मगुरुओं ने उसे अपना कहर विरोधी करार दे दिया। चुनांचे गैलीलियो पर मुकदमा चला। 70 वर्षीय गैलीलियो को रोम आकर अपनी सफाई देनी पड़ी पर उसे दोषी पाया गया। उसने शेष जीवन अपने प्रिय विषय "भौतिक विज्ञान" से अलग होकर नजरबंदी में काटा। इस तरह दूरबीन और न जाने कितने ही क्रांतिकारी प्रयोगों और विचारों का स्वामी एक दास की तरह यातना सहते हुए अंतत: 1642 में मर कर चर्च की गुलामी से आज़ाद हो गया। गैलीलियो को विज्ञान-दर्शनशास्त्री माना जाता है परंतु उनका मत था कि - 'सही वो चीज़ है जो प्रयोग

से सिद्ध की जा सके । तभी मैं आर्कमिडीज़ को सही मानता हूं, अरस्तु को नहीं ... भले ही अरस्तु को बड़ी पदवी प्राप्त हो ।'

अनेकानेक विद्वानों का कहना है कि 2000 आते ही दुनिया का हर देश इस सहस्त्राब्दी के अपने महापुरुषों की फ़ेहरिस्त बनायेगा । अगर पोप पॉल ने गैलीलियो को पुन: प्रतिष्ठित न किया होता तो इटली के लिए गैलीलियो को अपना महापुरुष कहना दुविधापूर्ण हो सकता था । पोप ने इटली और रोम को इस असमंजस से उबार लिया है और गैलीलियो पर अभिमान जताने का स्वाभाविक हक उन्हें सौंप दिया है । अब यह इटली पर निर्भर करता है कि फ़ैहरिस्त में वह गैलीलियो को क्या स्थान देता है ।

और बेचारा चार्ल्स डारविन :

बचपन में चार्ल्स डारविन को घोंघों, तितलियों और कीड़े-मकोड़ों को देखते रहने और उन्हें इकट्ठा करने का बड़ा शौक था । तब उन्हें क्या पता था कि 22 साल की उम्र में उन्हें इंग्लैंड के बाहर भी दुनिया के अजीबोगरीब और विशाल जीव-जगत को नज़दीक से देखने का मौका मिलेगा । यह मौका जान-पहचानवाले कप्तान फ़िट्सराय ने उन्हें दिया, जिनके संग 1831 में वे 5 साल की लंबी समुद्री यात्रा पर एच. एम. एस. बीगल नाम के जहाज में निकल पड़े । यात्रा से जब वे वापस इंग्लैंड लौटे तो अपने विशाल संग्रह को व्यवस्थित करने, प्राकृतिक जगत पर अध्ययन करने और अपने प्रेक्षणों से उस साहित्य की तुलना में उन्हें बरसों लग गये । और फिर जब उनकी पहली पुस्तक 24 नवंबर 1859 के दिन छप कर आयी तो देखते-देखते सारी प्रतियाँ बिक गयीं । यह मशहूर पुस्तक थी - "द ऑरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़" जिसने डारविन को एक युगपुरुष बना दिया । इस पुस्तक के 12 वर्ष बाद उन्होंने एक और पुस्तक लिखी - "डिसेंट ऑफ़ मैन" यही वह कृति है जिसमें डारविन ने मनुष्य को वानर से उत्पन्न तथा विकसित दर्शाया है । इन पुस्तकों में वर्णित अपने 'विकासवाद' तथा 'प्राकृतिक वरण' (नेचुरल सेलेक्शन) के सिद्धांतों तथा 'योग्यतम की अतिजीविता' (सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट) आदि तर्कों से वे प्रसिद्ध तो हो गये मगर धार्मिक क्षेत्रों में डारविन की कटु आलोचना होने लगी । कुछ लोगों ने तो उन्हें यहां तक कहा कि- "आप खुद एक बंदर की औलाद होंगे, हम नहीं !", तो कुछेक ने उन्हें यह उलाहना भी दिया कि आप ने डिग्री तो 'थियोलाजी' (धर्मशास्त्र) में ली है, फिर प्रकृति-विज्ञान के क्षेत्र में सेंध क्यों लगा रहे हो ? परंतु जब एक व्यक्ति ने दुखी होकर ईमानदारी से उनसे पूछा कि आख़िर मनुष्य को बंदर की औलाद बता कर उन्हें या दुनिया को क्या फायदा हुआ तो उन्होंने अपना दिल खोल कर रख दिया । वे बोले-"मित्र, मेरे सिद्धांत किसी दुश्मनी से प्रेरित नहीं । मुझे यह भी समझ में नहीं आता कि प्रेक्षणों, निष्कर्षों और तर्कों पर आधारित मेरे सिद्धांत किसी की भावना को क्यों ठेस पहुँचायेंगे, फिर भी मैं मानता हूँ कि मनुष्य का उद्भव बंदरों से हुआ है. . .छोटे बंदर या बैबून से अथवा उस जंगली से जो शत्रुओं को यातना देता है, शिशु बलि चढ़ाता है, पत्नियों को दासतुल्य मानता है और अंधविश्वासों से ओतप्रोत है । मेरे इस विचार का बड़ा फायदा यह है कि दुनिया के संपूर्ण मानवों का उद्गम स्रोत एक ही है, अत: उनमें भाईचारा पनपना चाहिए, रंग, जाति, ऊँच-नीच की भावना बनावटी है । यह सभी को समझ लेना चाहिए ।"

अपने इन सुंदर विचारों, दर्शन और विज्ञान के लिए डारविन ने उन दिनों के अनेक विचारकों का मन मोह लिया जिनमें लॉयल, हुकर, हेकेल तथा हक्सले शामिल थे । हेकेल तो डारविन को न्यूटन का समकक्ष ही समझते थे । परंतु रूढ़िवादी क्रिश्चियन चर्च को डारविन के विचार बहुत अखरे । वह इसलिए कि चर्च की मान्यताओं के मुताबिक ईश्वर ने सिर्फ 6 दिनों के भीतर विश्व के सभी मनुष्यों, जीव-जंतुओं को उनके अलग-अलग रूपों में बना डाला था । यही आदम और हौवा की कहानी बच्चों को स्कूल में पढ़ाई जाती थी । इस प्रकार ईश्वरीय शक्ति से उत्पन्न मनुष्यों के अहंकार पर डारविन के विकासवाद को हथौड़े की चोट माना गया और यहाँ-वहाँ, इंग्लैंड में, अमरीका व अन्य कई देशों में रूढ़िवादी ईसाइयों, गिरजों ने सिर्फ प्रत्यक्ष रूप से ही डारविन का अपमान नहीं किया बल्कि उन्हें अदालतों में भी घसीटा । मजे की बात तो यह है कि 19 अप्रैल 1882 को डारविन की मृत्यु के बाद भी अनेक नये मुकदमे 'विकासवाद' के खिलाफ दर्ज हुए और इस बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में भी इन पर सुनवाइयाँ होती रहीं ।

1996 में पोप जॉन पाल द्वितीय ने क्रिश्चियन विश्व के सौ से अधिक करोड़ लोगों की ओर से डारविन

से क्षमायाचना रुपी प्रायश्चित संपन्न किया और कहा- "विकासवाद का डारविन का सिद्धांत मजबूत है। मुझसे पहले 1950 में पोप-पायस बारहवें ने भी माना था कि विकास संबंधी यह सिद्धांत सचमुच एक संजीदा किस्म का दर्शन है। पर मैं अभी भी चाहूँगा कि हम यह मानें कि अंततः सभी प्राणियों का निर्माता ईश्वर ही है।"

प्रेमपूर्ण मानवीय चेहरा :

कई लोग यह सवाल उठाते हैं कि क्या रुढ़िवादी गिरजे का कहर सिर्फ गैलीलियो और डारविन जैसे वैज्ञानिकों पर ही बरसा ? कई अन्य वैज्ञानिक अथवा दार्शनिक भी इस प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक यंत्रणाओं अथवा अपमान के शिकार हुए होंगे। उनके लिए चर्च या पोप जॉन पॉल द्वितीय ने क्या किया ? तो इस सवाल का सरल सा जवाब यही है कि प्रायश्चित की यह प्रक्रिया स्वयं में अपूर्व और अनूठी है और जाने-अनजाने उन सभी से क्षमादान मांगती है जिन्हें चर्च ने नुकसान पहुँचाया। यह एक सांकेतिक रस्म अदायगी थी, व्यष्टि के नाम में समष्टि के लिए। क्या इतना काफ़ी नहीं कि एक सहृदय पोप ने सदियों पहले सेंट पीटर की गद्दी पर बैठे अपने पूर्व-सहयोगियों की ओर से खेद प्रकट किया, क्षमा मांगी। जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी अत्याचार हुए होंगे और आज भी हो रहे हैं, पर कहाँ है पोप जॉन पॉल-द्वितीय जैसा वह मानवीय और ममताभरा चेहरा जिसने आँसू पोछे हों ? जिसने दूसरों की पीड़ा अपने तन और मन में महसूस की हो ?

जी हाँ, पीड़ा . . .!!! यही तो मिली उसे बचपन से। जब पोप बच्चे थे तो स्कूल में नाम दर्ज था केरोल वॉजताइला, मगर माँ प्यार से उसे 'लोलेक' बुलाती थीं। जब केरोल आठ साल का था तो स्कूल से लौटने पर एक दिन उसे पता लगा कि दिल की बीमारी से माँ चल बसी। इस सदमे से केरोल उभरा भी न था कि खौफनाक स्कार्लेट फ़ीवर का शिकार हो गया (उसका स्टेथेस्कोप पोप की मेज़ की ड्रॉअर में आज भी रखा है)। फिर पिता चल बसे। इस प्रकार जवानी में कदम रखने से पहले ही केरोल ने उन सभी को खो दिया, जो उसे प्राणों से भी प्यारे थे। ईश्वर को शायद इतने से संतोष न हुआ तो पोलैंड में उसने हिटलर को भेज दिया। केरोल को मजदूरी करनी पड़ी, ठंड से ठिठुरते कई वर्ष बिताये।

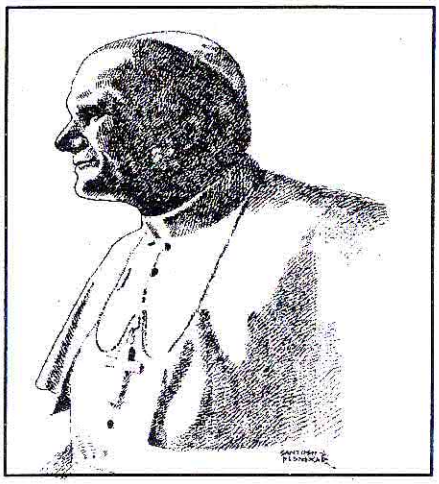

इस तरह पोलिश साहित्य और अभिनय के विशेषज्ञ बनने की हसरत लिये केरोल ने अपने जीवन में महसूस किया कि अभाव, मृत्यु, अपमान, अपूर्ण-आकांक्षाओं और अकेलेपन का दर्द क्या होता है। सच है, जिसने पीड़ा भोगी हो वही दूसरों की पीड़ा समझ सकता है। जिग्न्यू ब्रेज़ेज़िंस्की, अमरीका के पूर्व नेशनल सिक्योरिटी एडवाइजर का मत है कि आज सदियों बाद पोप की गद्दी पर पोप जॉन पॉल-द्वितीय के रुप में एक ऐसा पोप विराजमान हुआ है जिसका ईश्वर में अटूट विश्वास तो है ही, वह मानव की वेदना को भी सच में महसूस करता है।

गैलीलियो और डारविन जैसे विज्ञानियों की पुनर्स्थापना एक ज्वलंत मुद्दा जरुर है, मगर सच तो यह है कि पोप सचमुच आधुनिक हैं। तभी वे सीख देते हैं कि 'हॉरोस्कोप' से कोई नतीजा नहीं निकलता। नतीजा स्वयं की मेहनत और ईश्वर में सच्ची आस्था से ही पैदा होता है। ऐसी कई मिसालें दी जा सकती हैं जिनसे अहसास होता है कि पोप विज्ञान को मनुष्य जाति की ज़रुरत और आधुनिक संस्कृति समझते हैं। मगर साथ ही वे ताकीद भी करते हैं कि विज्ञान को भोगवाद का ज़रिया न बनाया जाय। हालांकि भारत में धर्म और विज्ञान का टकराव कभी नहीं रहा मगर पश्चिम में इस टकराव ने डारविन और गैलीलियो जैसे कई पड़ाव देखे। यह अत्यंत खुशी की बात है कि पोप जॉन पॉल ने अगली सदी में धर्म और विज्ञान के साथ-साथ चलने की सुंदर राह खोल दी है।

डीजल-पेट्रोल वाहनों से पर्यावरण प्रदूषण

एन. एस. त्यागी, आर. पी. कुलश्रेष्ठ एवं कालू राम
अग्नि अनुसंधान प्रयोगशाला,
केंद्रीय भवन अनुसंधान संस्थान,
रुड़की - 247 667 (उ. प्र.)

सड़क परिवहन से सर्वाधिक पर्यावरण प्रदूषण होता है। एक ओर जहाँ डीजल - पेट्रोल के दहन से उत्पन्न धुआँ और विषैली गैसें स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालती हैं, वहीं दूसरी ओर परिवहन से उत्पन्न ध्वनि भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो रही है। कुछ विशेष उपायों द्वारा वाहनों से उत्पन्न प्रदूषण पर नियंत्रण किया जा सकता है। इस संदर्भ में प्रस्तुत लेख में उपयोगी जानकारी दी गयी है।

अंतर्दहन इंजनों में ईंधन के रूप में डीजल-पेट्रोल का उपयोग किया जाता है। ईंधन-दहन से उत्पन्न यांत्रिक ऊर्जा को गतिज ऊर्जा में परिवर्तित करके वाहन को चलाया जाता है। आबादी बढ़ने के साथ-साथ वाहनों की संख्या भी निरंतर बढ़ती जा रही है। शहरीकरण और औद्योगीकरण बढ़ने से परिवहन व यातायात बढ़ रहा है और हर सड़क पर दौड़ते वाहनों की न खत्म होने वाली कतार, नगरों में वाहनों की अनियंत्रित भीड़ और कहीं जाम लग गया तो कई-कई किलोमीटर लंबी कतारें प्राणी जगत को ध्वनि प्रदूषण और वायु प्रदूषण की त्रासदी की ओर धकेल रही हैं। भारत की राजधानी दिल्ली में लगभग 25 लाख डीजल-पेट्रोल वाहन हैं और लगभग एक लाख वाहन प्रतिदिन दूसरे प्रदेशों से प्रवेश करते हैं।

डीजल-पेट्रोल के दहन के फलस्वरुप उत्पन्न विषैली गैसें इंजन के एग्जॉस्ट से होकर वातावरण में मिलती रहती हैं और पर्यावरण में प्रदूषण फैलाती हैं। ये गैसें स्वास्थ्य के लिए तो हानिकारक हैं ही, साथ ही "हरित प्रकोष्ठ प्रभाव (ग्रीन हाऊस इफेक्ट)" को भी बढ़ा रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण का दो तिहाई भाग डीजल-पेट्रोल वाहनों के द्वारा फैलाया जा रहा है। सीसायुक्त पेट्रोल के उपयोग के कारण पर्यावरण में उपस्थित सीसा सभी के लिए हानिकारक है और छोटे बच्चों के लिए तो बड़ा घातक सिद्ध हो रहा है। वाहनों के कारण पर्यावरण में ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ रहा है। प्रदूषण के अदृश्य खतरों में सबसे घातक ध्वनि प्रदूषण को माना जाता है। डीजल-पेट्रोल वाहनों द्वारा उत्पन्न वायु प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण के खतरों की मनुष्य को जानकारी देना तथा प्रदूषण नियंत्रण के उपायों के प्रति सजग करना इस लेख का उद्देश्य है। प्रदूषण नियंत्रण के उपायों से ऊर्जा की बचत भी साथ-साथ होती है।

डीजल-पेट्रोल वाहनों से उत्पन्न वायु प्रदूषण एवं मानव स्वास्थ्य :

डीजल-पेट्रोल वाहनों से निकलने वाले धुएं में कार्बन-डाई-ऑक्साइड, कार्बन-मोनो-ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, कार्बन कण, नाइट्रोजन-डाई-ऑक्साइड तथा सीसा (लेड) होता है। वायु में मिलकर ये गैसें साँस के द्वारा शरीर में पहुंचती हैं और अनेकों बीमारियों को जन्म देती हैं। वायु में कार्बन-मोनो-ऑक्साइड की उपस्थिति के कारण रक्त को ऑक्सीजन की उचित मात्रा नहीं मिल पाती है। अतः मनुष्य बीमारियों की पकड़ में आने लगता है। हाइड्रोकार्बन और कार्बन कणों से मनुष्य

कमजोरी, थकावट और भ्रम आदि का शिकार हो जाता है। नाइट्रोजन-डाई-ऑक्साइड की उपस्थिति के कारण व्यक्ति आंखों में जलन और खुजली महसूस करने लगता है। कभी-कभी व्यक्ति सीने में दर्द, खांसी, दमा और सांस की अन्य बीमारियों की पकड़ में भी आ जाता है।

पेट्रोल की गुणवत्ता (ज्वलनशीलता) बढ़ाने के लिए उसमें टेट्राइथाइल लेड मिलाते हैं और पेट्रोल के जलने पर यही सीसा पर्यावरण में फैलता हैं। शरीर में प्रविष्ट सीसा का एक तिहाई भाग रक्त में मिलकर अस्थियों, ऊतकों तथा मस्तिष्क में स्थिर हो जाता है। सीसा का प्रभाव कम आयु के बच्चों पर अधिक पड़ता है। तीन वर्ष से कम आयु के बच्चों में सीसा के कारण बुद्धिलब्धि प्रभावित होती है, सीखने-समझने की शक्ति घटती है, स्वभाव में परिवर्तन आने लगता है, बच्चा शांत नहीं बैठता है, ध्यान विचलित होता है और बड़े होने पर पढ़ने में मंद हो जाता है। बच्चा विशेषतः गणित में पिछड़ जायेगा और उसमें अनुत्तीर्ण होने की प्रवृत्ति स्वस्थ बच्चों की तुलना में सात गुना अधिक हो जाती है।

अमरीका में केवल मोटरवाहनों से निकले धुएं द्वारा प्रति वर्ष 5000 लाख पाउण्ड सीसा वायुमंडल में छोड़ा जाता है जिसकी पर्याप्त मात्रा विभिन्न माध्यमों से जीवित जीवों में प्रविष्ट होती रहती है। स्वीडन में हाल में हुए एक अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि सड़क के आस-पास के पेड़ पौधों में सीसा की मात्रा 300 पी. पी. एम. से 500 पी. पी. एम. तक पायी जाती है। अमरीका में सड़कों के आस-पास के पेड़-पौधों में सीसा की मात्रा अनुमानतः 3000 पी. पी. एम. तक आंकी गयी हैं। यह सीसा पेड़-पौधों में जल और वायु दोनों माध्यम से प्रविष्ट होता है और उनके द्वारा मानव व अन्य जीवों में पहुंचता है। शताब्दी पूर्व जब डीजल-पेट्रोल वाहन इतनी ज्यादा संख्या में नहीं थे, सड़क के आस-पास के पेड़-पौधों में सीसा की मात्रा 20 पी. पी. एम. से कम पायी जाती थी। मानव एवं अन्य जीवों में 0.5 पी. पी. एम. सीसा की मात्रा तो सर्वथा विषाक्त ही है। रक्त के प्रति डेसीलीटर में दस माइक्रोग्राम से अधिक सीसा खतरे की रेखा से ऊपर माना जाता है।

डीजल-पेट्रोल वाहनों से निकलने वाली कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस के पर्यावरण में इसकी अधिकता से हरित प्रकोष्ठ प्रभाव बढ़ता जा रहा है। इस के कारण पृथ्वी के तापमान में अप्राकृतिक वृद्धि कितनी ही समस्याओं को जन्म देगी। तापमान वृद्धि से ध्रुवीय हिम पिघलने से जल प्लावन के कारण तटीय क्षेत्र जलमग्न हो सकते हैं तापमान बढ़ने से मनुष्य की कार्यक्षमता भी घटती है।

डीजल-पेट्रोल वाहनों द्वारा ध्वनि प्रदूषण बढ़ रहा है। प्रदूषण के अदृश्य खतरों में सबसे घातक ध्वनि प्रदूषण (शोर) माना जा रहा है। नोबेल पुरस्कार विजेता जर्मनी के वैज्ञानिक रॉबर्ट कोच ने इस सदी के पहले दशक में ही चेताया था कि एक दिन ऐसा आयेगा जब ध्वनि प्रदूषण मानव स्वास्थ्य का सबसे बड़ा दुश्मन होगा। प्रख्यात अमरीकी वैज्ञानिक डॉ. एडवर्ड सी. ह्यूम के अनुसार दीर्घकाल तक बने रहने वाला शोर गंभीर मानसिक रोग उपजाता है और कई मामलों में तो हिंसा को भी। ध्वनि प्रदूषण कई जानलेवा बीमारियों को जन्म दे रहा है। 75 डेसीबल (डीबी) से अधिक तीव्रता का शोर हानिकारक माना गया है। एक मीटर की दूरी से की जा रही सामान्य बातचीत की ध्वनि तीव्रता 60 डीबी होती है जबकि भारी ट्रैफिक में 80 डीबी, रेलगाडी-100, कार का होर्न 100 से 110, हवाई जहाज 140 से 170 और मोटर साइकल 80 डीबी की ध्वनि पैदा करते हैं।

वैज्ञानिकों का दावा है कि 85 डीबी से अधिक की ध्वनि लगातार सुनने से बहरापन आ सकता है, 80 डीबी से अधिक ध्वनि के कारण एकाग्रता और मानसिक कुशलता में कमी आ जाती है, 120 डीबी से अधिक ध्वनि गर्भवती स्त्रियों और पशुओं के भ्रूण को हानि पहुंचा सकती है, 155 डीबी से अधिक ध्वनि में मानव त्वचा जलने लगती है और 180 डीबी से अधिक ध्वनि पहुंचने पर मृत्यु हो सकती है। फ्रांस में हुए हाल ही के अनुसंधान के अनुसार ध्वनि प्रदूषण के कारण रक्त में कोलेस्ट्रोल और कार्टिसोन का स्तर बढ़ जाता है जिससे हाइपरटेंशन होना तय है जो आगे चलकर हृदयरोग व मानसिक रोग जैसी घातक बीमारियों को जन्म देता

है । आस्ट्रिया के डॉ. ग्रिफिथ का दावा है कि शोर से मस्तिष्क के तंतु कमजोर हो जाते हैं और यह आदमी को समय से पहले बूढ़ा कर देता है । शोर के कारण श्वसन गति, रक्तचाप, नाड़ी गति में उतार-चढ़ाव, अनिद्रा, कुंठा, सिरदर्द, झुंझलाहट आदि कुप्रभाव शरीर पर पड़ते हैं । यही कारण है कि ध्वनि प्रदूषण को "स्लो पॉयज़न" भी कहते हैं । ध्वनि प्रदूषण मानव स्वास्थ को किस सीमा तक प्रभावित करता है यह चित्र -1 में दिखाया गया है ।

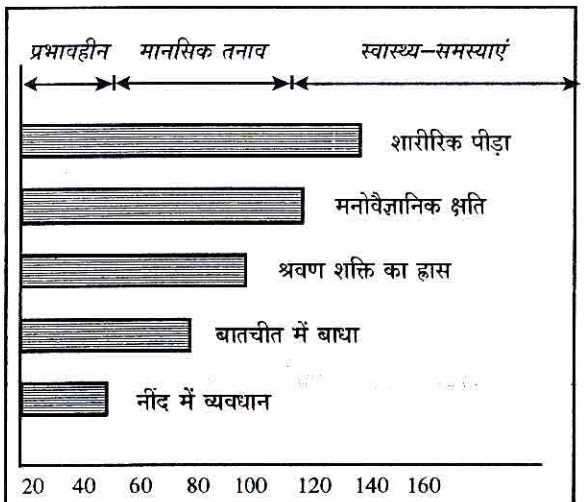

चित्र - 1 : ध्वनि प्रदूषण का मानव-स्वास्थ्य पर प्रभाव

पशु-पक्षी और पेड़-पौधे भी ध्वनि प्रदूषण के कुप्रभाव से अछूते नही हैं । कुछ ऐसे मामले भी सामने आये हैं कि शोर के कारण मुर्गियों ने अंडे देना बंद कर दिया, मवेशियों के दूध देने की मात्रा भी घट गयी और पेड़ों पर फल कम आने लगे या फलों में बीमारी आ गयी तथा पेड़ झुक गये । कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डॉ. हेरल्स जॉनसन का दावा है कि सुपरसॉनिक जेट विमानों द्वारा उत्पन्न 150 डीबी से अधिक ध्वनि के कारण कुछ ही सालों में ओजोन की आधे से अधिक पट्टी नष्ट हो जायेगी जिससे मानव की प्रतिरक्षण क्षमता बुरी तरह प्रभावित होगी । देश की राजधानी दिल्ली में 60-70 डीबी शोर हमेशा रहता है और इसमें डीजल-पेट्रोल वाहनों के इंजनों और हॉर्नों से उत्पन्न शोर का अत्यधिक योगदान है ।

डीजल-पेट्रोल वाहनों से उत्पन्न प्रदूषण पर नियंत्रण एवं ऊर्जा की बचत :

डीजल-पेट्रोल वाहनों से उत्पन्न प्रदूषण इनकी संख्या और इनकी स्थिति तथा कितने समय तक वे उपयोग में रहते हैं, इस पर निर्भर करता है । सड़कों की ख़राब हालत भी पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा दे रही है । वाहनों की बढ़ती संख्या और अनावश्यक उपयोग, चालक की लापरवाही या अज्ञानता, वाहन के इंजन की ख़स्ता हालत और खटारा बॉडी, प्रेशर हॉर्नों का उपयोग, घटिया डीजल-पेट्रोल का उपयोग तथा सड़कों की दयनीय स्थिति और कम चौड़ाई, वाहनों से उत्पन्न होने वाले वायु प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण को बढ़ाती हैं तथा साथ ही साथ ऊर्जा (डीजल-पेट्रोल, टायर) की खपत भी बढ़ जाती है । प्रदूषण पर नियंत्रण एवं ऊर्जा की बचत के लिए निम्न उपाय किये जाने चाहिए :

1. डीजल-पेट्रोल वाहनों का सीमित उपयोग
2. प्रशिक्षित एवं जागरूक वाहन चालक
3. व्यवस्थित एवं नियंत्रित परिवहन व्यवस्था
4. डीजल-पेट्रोल वाहनों का सही रख-रखाव एवं मरम्मत
5. सही गुणवत्ता वाले डीजल-पेट्रोल का उपयोग
6. सड़कों का सही निर्माण, रख - रखाव एवं वांछित चौड़ाई
7. डीजल-पेट्रोल के विकल्पों का विकास एवं उपयोग
8. राष्ट्रहित एवं लोकहित के लिए जन-जागृति

डीजल-पेट्रोल वाहनों का अनावश्यक उपयोग न करने और वाहन की पूर्ण क्षमता का उपयोग होने पर सड़क पर वाहनों की संख्या सीमित हो जायेगी जिससे डीजल-पेट्रोल की खपत घटेगी और वाहनों द्वारा उत्पन्न प्रदूषण कम होगा, दुर्घटनाएं कम होंगी तथा सड़कों के रख-रखाव व मरम्मत पर व्यय घटेगा ।

डीजल-पेट्रोल वाहनों से प्रदूषण कम उत्पन्न हो इसमें वाहन चालकों की भी अहम् भूमिका हो सकती है । इंजन के क्लच, गियर और एक्सीलरेटर का सही-सही प्रयोग करने से प्रदूषण एवं डीजल-पेट्रोल की खपत पर नियंत्रण होता है । वाहन के एग्जॉस्ट से निकलन वाले धुएं की नियमित प्रदूषण-जांच और उसी के अनुरुप

इंजन की मरम्मत कराते रहना, रेडिएटर में पानी, पहियों में हवा की आवश्यक मात्रा बनाये रखना इस दिशा में महत्वपूर्ण सकारात्मक भूमिका रखते हैं। अंतर्दहन इंजन में डीजल-पेट्रोल का अपूर्ण दहन कई प्रकार से हानि पहुंचाता है, इससे शक्ति कम उत्पन्न होगी, ऊर्जा (डीजल-पेट्रोल) की खपत ज्यादा होगी, धुआं ज्यादा उत्पन्न होगा यानि प्रदूषण बढ़ेगा और इंजन जल्दी खराब होगा। इस प्रकार के लक्षणों पर चालक को नजर रखनी चाहिए और इसके कारणों के निवारण में जरा भी विलंब नहीं करना चाहिए तथा इस स्थिति वाले वाहन को जब तक मरम्मत न हो जाये नहीं चलाना चाहिए। एक समय सीमा के बाद पुराने वाहनों को मृत घोषित करके सड़क परिवहन से हटा दिया जाना चाहिए।

सही गुणवत्ता के डीजल-पेट्रोल का ही उपयोग किया जाये। पेट्रोल पंपों पर सही गुणवत्ता का डीजल-पेट्रोल ही बिके, मिलावट करने की किसी की हिम्मत ही न हो, ऐसी व्यवस्था बनाने की आवश्यकता है।

सड़कों का निर्माण मानक के अनुसार हो, सड़क निर्माण की सामग्री पूरी मात्रा में और सही गुणवत्ता वाली लगायी जाये, सड़कों का रख-रखाव व मरम्मत समय पर होती रहे तो डीजल-पेट्रोल वाहनों से ध्वनि प्रदूषण और वायु प्रदूषण कम होगा तथा डीजल-पेट्रोल की खपत भी घटेगी।

अब समय आ गया है जब डीजल-पेट्रोल के टिकाऊ और पर्यावरण-हितैषी विकल्पों की खोज, उत्पादन तथा उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। नेचुरल कम्प्रेस्ड गैस (एन. सी. जी.), लिक्विफाइड पेट्रोलियम गैस (एल. पी. जी.), प्रोपेन गैस, पॉवर एल्कोहल, बैटरी और सौर-ऊर्जा का उपयोग वाहनों में किया जाये तो डीजल-पेट्रोल पर निर्भरता कम हो जायेगी। ऐसा करने से एक तो प्रदूषण कम होगा और दूसरे धन की बचत भी होगी क्योंकि ये विकल्प सस्ते हैं। डीजल-पेट्रोल के भंडार सीमित हैं और उत्पादन भी खपत से कम है अत: विदेशों से डीजल-पेट्रोल खरीदना पड़ता है जिसमें विदेशी मुद्रा व्यय करनी पड़ती है। प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले कुप्रभावों एवं ऊर्जा की अनावश्यक खपत से राष्ट्र की आर्थिक स्थिति पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों के प्रति लोगों में जागृति लाना भी आवश्यक है। दूरदर्शन, चलचित्र, अखबार, पत्रिका, प्रदर्शनी, संगोष्ठी एवं नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से समाज में ऐसी भावना जगायी जाये कि लोग बनावट और झूठी शान-शौकत की अंधी दौड़ से बाहर निकलकर डीजल-पेट्रोल वाहनों का स्वेच्छा से उपयोग सीमित करें, वाहन कम से कम प्रदूषण उत्पन्न करें, इसके प्रति सजग रहें और डीजल-पेट्रोल की खपत कम से कम ही करें।

विश्व के कई देशों ने पर्यावरण प्रदूषण के नियंत्रण के लिए सख्त कदम उठाये हैं और अंतर्राष्ट्रीय मानकीकरण संगठन (आई. एस. ओ.) ने कुछ मानक भी तैयार किये हैं। अमरीका, इंग्लैंड, रूस, फ्रांस, ऑस्ट्रिया, डेनमार्क आदि देशों में ध्वनि प्रदूषण कम करने के लिए ध्वनि शोषक यंत्रों का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। 1980 के पर्यावरण सुरक्षा कानून में भारत सरकार ने ध्वनि प्रदूषण को वायु और जल प्रदूषण के ही समान महत्व दिया है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा औद्योगिक, व्यापारिक, आवासीय क्षेत्रों और अस्पतालों को शांत क्षेत्र घोषित कर वहां ध्वनि तीव्रता की अधिकतम सीमा निर्धारित की गयी है। डीजल-पेट्रोल वाहनों द्वारा उत्पन्न होने वाले वायु प्रदूषण को कम करने के लिए इंजन के एग्जॉस्ट से निकलने वाले धुएं में कार्बन-मोनो-ऑक्साइड की अधिकतम सीमा भी निर्धारित कर दी गयी है। वाहनों के प्रदूषण की जांच कराकर उसका प्रमाणपत्र वाहन के साथ रखना अनिवार्य कर दिया गया है अन्यथा वाहन चालक को जुर्माना भरना पड़ेगा। पर्यावरण सुरक्षा कानून का सख्ती से पालन किया जाये तो प्रदूषण पर नियंत्रण हो सकेगा और साथ ही साथ इससे निपटने के लिए कानून से कहीं अधिक समाज की सजगता कारगर सिद्ध होगी। बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण और ऊर्जा संकट के बारे में आम आदमी को जागरूक करने के लिए सरकारी प्रचार माध्यमों के साथ-साथ स्वयंसेवी संगठनों की जोर-शोर से भागीदारी आज के समय की पुकार है।

प्रमात्रा (क्वांटम) सिद्धांत का रसायन शास्त्र में उपयोग

कुमारी वंदना क. एवं प्रो. मनोज कुमार मिश्र
रसायनशास्त्र विभाग, भारतीय प्राद्यौगिकी संस्थान,
पवई, मुंबई-400 058

प्रमात्रा सिद्धांत अणुओं एवं परमाणुओं की रासायनिक क्रियाओं का नियामक सिद्धांत है। अणुओं एवं परमाणुओं की जटिल संरचना एवं उनके परस्पर संयोग से संबंधित क्रियाओं को समझने के लिए प्रमात्रा सिद्धांत का उपयोग आवश्यक है। जैसा कि आगे आनेवाले समीकरणों से विदित होगा । प्रमात्रा सिद्धांत का रसायनशास्त्र में उपयोग कई कठिनाइयों से परिपूर्ण है। डॉ. पोपल एव डॉ. कोहन के अनुसंधान से इन समस्याओं का निवारण हुआ और प्रमात्रा सिद्धांत की उपयोगिता में उनके द्वारा किया गया सरलीकरण निर्णायक सिद्ध हुआ है । उनके और उनके सहयोगियों के अनुसंधान के परिमाणस्वरूप प्रमात्रा रसायनिकी, रसायनशास्त्र की बहुविध समस्याओं के सरलीकरण एवं हल की प्रक्रियाओं का एक अभिन्न अंग बन गया है। इन दोनों महान वैज्ञानिकों के इस योगदान के सम्मान में वर्ष 1998 का रसायन शास्त्र का नोबेल पुरस्कार नॉर्थवेस्टर्न विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. जॉन अ. पोपल एवं कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सांता बारबरा, के प्राध्यापक डॉ. वाल्टर कोहन को संयुक्त रूप से दिया गया।

ऊर्जा का विज्ञान - प्रमात्रा सिद्धांत :

न्यूनतम ऊर्जा सिद्धांत :

रसायनों के क्रियान्वयन का नियामक समीकरण :

$\Delta G < 0$

$\Delta G = \Delta H - T\Delta S \cong \Delta H = \Delta E + P\,\Delta V \cong \Delta E$

$\Rightarrow \Delta G \cong \Delta E$

$\Delta G \cong \Delta E$; $\Delta G < 0 \cong \Delta E < 0$ जिससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि रासायनिक क्रियाएं उस दिशा में जायेंगी जिसमें ऊर्जा न्यूनतम हो। उदाहरण के तौर पर जल के अणुओं का बंध दैर्घ्य (bond length) 0.95 Å एवं बंध कोण 104.5^0 इसीलिए है क्योंकि जल के अणुओं की ऊर्जा इसी बंध दैर्घ्य एवं बंध कोण के लिए न्यूनतम होती है।

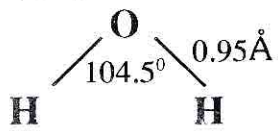

प्रमात्रा सिद्धांत :

प्रमात्रा सिद्धांत का मूल समीकरण श्रॉडिंजर (Schrodinger) समीकरण के नाम से विख्यात है, यथा : $H\Psi = E\Psi$

जहां,

$$H=H(\vec{r}_1,\vec{r}_2,\ldots\vec{r}_n;\vec{R}_M)=\left(\frac{-h}{2\pi}\right)^2\frac{1}{2m}\sum_{i=1}^{n}\nabla_1^2 - \sum_{i=1}^{M}\sum_{\alpha=1}\frac{Z_\alpha e^2}{4\pi\varepsilon_0\vec{r}_{ia}} + \sum_{i=1}^{n}\sum_{j>i}^{n}\frac{e^2}{4\pi\varepsilon_0 r_{ij}}$$

एवं, $\nabla_1^2 = \frac{\partial^2}{\partial x^2}+\frac{\partial^2}{\partial y^2}+\frac{\partial^2}{\partial z^2}$

$$\Psi=\Psi(\vec{r}_1,\vec{r}_2,\ldots\ldots\vec{r}_n)$$

H_2O के लिए, M=3, $\vec{R}_1,\vec{R}_2,\vec{R}_3 \Rightarrow 3x3=9$ चरांक

n =2+8=10, $\vec{r}_1,\vec{r}_2,\ldots\ldots\vec{r}_{10}$ =3x10=30 चरांक

इस गणना के अनुसार इलेक्ट्रॉन का श्रॉडिंजर समीकरण 30 चरांकों का समीकरण होगा ।

जल के अणुओं के लिए 30 चरांकों का समीकरण यानी Ψ (30) चरांकों का फलन । इस जटिल समीकरण का हल असंभव है । जाहिर है कि एक ऐसा समीकरण जो सिर्फ एक चरांक का है ज्यादा सरल होगा और ऐसे ही एक समीकरण का नाम है हार्ट्री-फॉक समीकरण

$$H(\vec{r}_1, \vec{r}_2, \ldots\ldots, \vec{r}_N) \quad \rightarrow F(\vec{r})$$

$$F(\vec{r})\,\Psi_i(\vec{r}) = \varepsilon_i \Psi_i(\vec{r})$$

$$\Psi \cong \Psi_0(\vec{r}_1, \ldots\ldots \vec{r}_n) = \prod_{i=1}^{n} \Psi_i(\vec{r})$$

Ψ_0 अपर्याप्त, सहसंबंधता का अभाव

$$\Psi = \sum_{n=0} a_n \Psi_n$$

$$\Psi = \Psi_0 + \Delta\Psi; \qquad \Delta\Psi = \Delta\Psi^1 + \Delta\Psi^2 + \ldots.$$

सहसंबंधता की अनुपस्थिति को कई और जटिल प्रक्रियायों एवं समीकरण के द्वारा काफी दूर तक हल किया जा सकता है लेकिन हार्ट्री-फॉक समीकरण स्वयं ही काफी जटिल है ।

हार्ट्री-फॉक समीकरण की जटिलता

$$F(\vec{r}_1) = \frac{1}{2}\nabla_1^2 + \sum_{\alpha=1}^{M} \frac{Z_\alpha}{r_{1\alpha}} + V^{HF}(\vec{r}_1) =$$

$$(\vec{r}_1) + V^{HF}(\vec{r}_1)$$

$$F(\vec{r}_1)\,\Psi_i(\vec{r}_1) = \left(\frac{-1}{2}\nabla_1^2 - \sum_{\alpha=1}^{M} \frac{Z_\alpha}{r_{1\alpha}}\right)$$

$$\Psi_i(\vec{r}_1) + \left[\sum_j \int d\vec{r}_2 \frac{|\Psi_j(\vec{r}_2)|^2}{\vec{r}_{12}} \Psi_i(\vec{r}_1)\right] -$$

(कूलम्ब)

$$\left[\sum_j \int d\vec{r}_2 \frac{\Psi_j^*(\vec{r}_2)\,\Psi_i(\vec{r}2)}{\vec{r}_{12}} \Psi_i(\vec{r}_1)\right]$$

(विनिमय)

इन्टिग्रो - डिफरेंशियल समीकरण

हार्ट्री-फॉक-रुथान समीकरण

$$\Psi i = \sum_{j=1}^{N} C_{in}\,\chi_n \qquad \Psi = \chi C$$

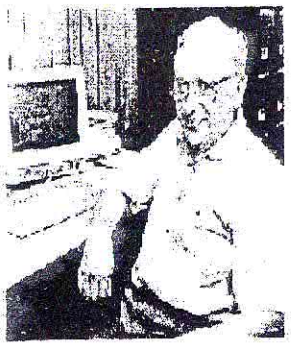

प्राध्यापक जॉन पोपल

सॉमरसेट, इंगलेंड में 31-10-1925 को जन्में पोपल ने केंब्रिज विश्वविद्यालय से गणितशास्त्र में पीएच. डी. (सर जॉन लेनर्ड जोन्स) की डिग्री हासिल की । आप 1951-58 तक ट्रिनिटि महाविद्यालय, केंब्रिज विश्वविद्यालय में अध्येता, 1954-58 के दौरान गणितशास्त्र के अध्यापक (केंब्रिज विश्वविद्यालय), 1958-64 के दौरान राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, टेडिंगटन के अधीक्षक पद पर कार्य, 1964-93 में कारनेगि विश्वविद्यालय में रसायन भौतिकी के प्राध्यापक और 1993 से अबतक नॉर्थवेस्टर्न विश्वविद्यालय में रसायनशास्त्र के प्राध्यापक के रूप में कार्य किया । आपके 400 के लगभग प्रकाशन हैं । पैरिसर- पार - पोपल सिद्धांत (1953) , एन. एम. आर. (1965), सी. एन. डी. ओ, आई. एन. डी. ओ, एम. आई. एन. डी. ओ (1970), गॉशियन (1970-98) इत्यादि आपके प्रमुख योगदान हैं ।

आधारीय फलनों का समूह ($\chi_1, \chi_2, \chi_3 \ldots\ldots \chi_N$)

हार्ट्री-फॉक-रुथान समीकरण :

$$F\,\Psi i = \varepsilon_i \Psi_i \Rightarrow \quad FC = C\varepsilon$$

$$F_{ij} = \langle \chi_i | h | \chi_i \rangle + \sum_k^{occ} \int\int \chi_i^*(\vec{r}_1)\,\chi_k^*(\vec{r}_2)$$

$$\frac{1}{r_{12}} \chi_k(\vec{r}_2)\chi_k(\vec{r}_1) d\vec{r}_1 d\vec{r}_2 -$$

$$\sum_k^{occ} \int\int \chi_i^*(\vec{r}_1)\chi_k^*(\vec{r}_2) \frac{1}{r_{12}} \chi_j(\vec{r}_2)\chi_k(\vec{r}_2) d\vec{r}_1 d\vec{r}_2$$

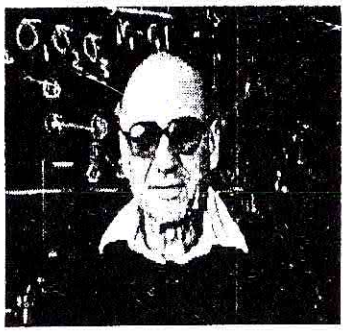

प्राध्यपक वाल्टर कोह्न

आपका जन्म वियेना, आस्ट्रिया में 1 मार्च 1923 को हुआ। आपने हारवर्ड विश्वविद्यालय से भौतिकशास्त्र में पीएच. डी. (प्राध्यापक जूलियन स्विंगर) की उपाधि प्राप्त की, आप हारवर्ड विश्वविद्यालय (1948-50) में भौतिकशास्त्र के शिक्षक, कारनेगि मेलन विश्वविद्यालय (1950-60) में भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सैन डियेगो (1960-79) में भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक और 1979 से 84 तक, भौतिकी सिद्धांत का संस्थान, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, संता बारबरा के निदेशक पद पर कार्य किया है। 1984 से अबतक कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, संता बारबरा में भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक, पद पर कार्य कर रहे हैं। आपके 200 के लगभग प्रकाशन हैं। के. के. आर सिद्धांत (1954), घनत्व फलनक सिद्धांत (1964), फोनॉन में कोहन अनियमितता इत्यादि आपके प्रमुख योगदान कहे जा सकते हैं।

$$= \langle \chi_i | h | \chi_i \rangle + \sum_{k}^{occ} \langle \chi_i \chi_k | \chi_k \chi_i \rangle$$

(1 इलेक्ट्रॉन) (2 इलेक्ट्रॉन)

आधारीय फलनों का समूह $(\chi_1, \chi_2, \chi_3 \cdots\cdots \chi_N)$

2 इलेक्ट्रॉन समाकलनों की संख्या ~ N^4

पोपल का योगदान :

$H_2O \rightarrow 30$ इलेक्ट्रॉन ~

$(\chi_1, \chi_2 \cdots\cdots \chi_{100}) \Rightarrow N = 100$

$N^4 = (100)^4$ यानि 10^8~दस करोड़ 2 इलेक्ट्रॉन समाकलनों का संगणन एवं संचयन काफी दुरुह है।

बड़े अणु - 200 आधारीय फलन $\Rightarrow$160 करोड़ समाकलन

पोपल : 1. समाकलनों को कम करने की विधियाँ (पी.पी.पी., सी.एन.डी.ओ, आई.एन.डी.ओ),

2. आधारीय फलन वर्ग का मानकीकरण

3. आकलन विधियों का सुधार।

हार्ट्री-फॉक में सहसंबंधता का अभाव, ऊर्जा आकलन में अपरिशुद्धता से रसायनिक क्रियाओं के वेग क्रमांकों का समूल सिद्धांतीय परिकलन में अभीष्ट शुद्धि का अभाव।

$\frac{E_a}{} \sim +1$ किलो कैलोरी $\Rightarrow$वेग क्रमांक में 100 गुणा का अंतर

$$E = E_0(HF) + {}^{(1)} + E^{(2)} + E^{(3)} + E^{(4)} + \cdots\cdots$$

$E^{(2)}, E^{(3)}, E^{(4)}, N^7 \sim (200)^7 = 2^7 \times 10^{14}$

इनके सहज एवं सही आकलन और समुचित विनियमन एवं संयोजन से पोपल द्वारा विकसित संगणन संवेष्टन गॉसियन 98 एक बहुमुखी एवं अति-उपयोगी रासायनिक यंत्र की तरह विकसित हो गया है। जिस तरह रसायनविद N.M.R. या I.R. का उपयोग करते हैं, कुछ इसी तरह गॉसियन का भी उपयोग प्रचलित हो गया है। पोपल के इस योगदान के बहुविध प्रभाव को देखते हुए नोबेल पुरस्कार आवश्यक ही था।

इलेक्ट्रॉन घनत्व के लिए कोहन शाम समीकरण :

इलेक्ट्रॉन घनत्व $n(r) =$

$$\rho(r) = \sum_i \Psi_i^*(\vec{r})\ \Psi_i(\vec{r})$$

कोहन शाम द्वारा हार्ट्री-फॉक के समान Ψ_i के लिए समीकरण

$$F\Psi_i = \varepsilon_i \Psi_i \Rightarrow FC = SC\varepsilon$$

$$F_{\mu\nu} = h_{\mu\nu}^{core} + J_{\mu\nu} + F_{\mu\nu}^{xc}$$

$$F_{\mu\nu}^{xc} = \int \left[\frac{\partial f}{\partial \rho_\sigma} \phi_\mu \phi_\nu + \left(2 \frac{\partial f}{\partial \gamma_{\alpha\alpha}} \rho_\alpha + \frac{\partial f}{\partial \gamma_{\alpha\beta}} \rho_\beta \right) (\phi_\mu \phi_\nu) \right] dr$$

(शेष पृष्ठ -43 पर देखें)

एक विश्लेषण :

विज्ञान और संवेदनशीलता : मध्य-स्तरीय होने का मूल कारण एवं विज्ञान-प्रौद्योगिकी का भविष्य

यह हमारी उपलब्धियों तथा असफलताओं के मूल्यांकन करने का समय है - इस शताब्दी में भारत की साख में विज्ञान के क्षेत्र का केवल एक ही नोबेल पुरस्कार विजेता हुआ है, दुनिया में फैलते हुए विश्व-श्रेणी के ज्ञान में हमारे योगदान की संभाव्य-क्षमता क्या है तथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण, यह कि क्या हम आने वाले नये सहस्त्राब्द में राष्ट्र की अपेक्षाओं को पूरा करने में सक्षम हैं ? हमने सहस्त्राब्द के अंति शतक के पूरे होने तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी (एस एंड टी) में असामान्य व उत्तेजनापूर्ण सक्रियता देखी है। ब्रिटिश परंपरा के प्रभाव क्षेत्र में आरंभ मात्र 150 वर्ष पहले देश में स्थापित तीन विश्वविद्यालय व बाद में विश्वविद्यालयों तथा अनुसंधान संस्थानों की संख्या व आकार में वृद्धि राष्ट्रीय मांग के परिणामस्वरुप हुई जिसकी पराकाष्ठा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विज्ञान-नीति-संकल्प के रुप में हुई।

मध्य-स्तरीय होने के लक्षण :

विश्व श्रेणी के ज्ञान के अंतर्गत आधार-विज्ञानों (Basic Sciences) में भारतीय योगदान शताब्दी के पूर्वार्ध में स्वदेश के रमण और बसु जैसे वैज्ञानिकों से आया। परंतु बाद में अधिकतम योगदान विदेश में स्थित प्रवासियों, जैसे प्रो. चंद्रशेखर और हरगोविंद खुराना, का था। स्वतंत्रता के बाद तुलनात्मक दृष्टि से स्वदेश में वैज्ञानिकों द्वारा बहुत अधिक योगदान नहीं हुआ यद्यपि प्रो. श्रीवास्तव के द्वारा किये गये एक आंकलन (टाइम्स ऑफ इंडिया 2.1.1999) के अनुसार हमारे विज्ञान-प्रौद्योगिकी के प्रयासों को बृहद् रुप से प्रोत्साहित किया गया है। स्वतंत्रता के बाद हमारे विश्वविद्यालयों ने बड़ी संख्या में पीएच. डी. धारकों को समाज को दिया है। परंतु इनमें से कोई भी रमण या बसु के कार्य के आधारभूत ज्ञान की गुणवत्ता की बराबरी नहीं कर पाया है।

व्यतिरेकी कार्य-निष्पादन :

नालंदा और तक्षशिला जैसे हमारे विश्वविद्यालयों की समाप्ति पर हम पश्चिम से बने अंतर को क्रमशः कम कर सकते थे; ऑक्सफोर्ड और केम्ब्रिज के आरंभ होने के कुछ शताब्दियों के अंतराल में ही विश्वविद्यालयों की स्थापना कर सकते थे; हमने परमाणु, कृषि, औषध-विज्ञान, इलेक्ट्रॉनिक और संचार क्षेत्रों में पचास वर्ष के कम समय में ही उस अंतर को करीबन पाट दिया है, और कंप्यूटर सॉफ्टवेयर में हम कदाचित उच्च शिखर पर पहुँचे हुए हैं। पर इन प्रौद्योगिक उपलब्धियों का हमारी संस्कृति पर अंधाधुंध प्रभाव पड़ा है। आधारभूत ज्ञान सहज ही में उपलब्ध था जिसका श्रेय पश्चिमी बौद्धिक परंपरा का "ज्ञान के लिए खुलापन" है और प्रायः सभी मोर्चों पर हमने स्वदेशी प्रणालियों द्वारा उछाल ली है। श्वास लेने वाली गति से सफलता प्राप्त किये गये प्रौद्योगिक विकास ने हमारे समाज के सभी वर्गों की अपेक्षा को आम तौर पर ऊँचा उठाया है जिसके फलस्वरुप बढ़ती हुई संख्या में होनहार विद्यार्थी इंजीनियरी तथा औषध-विज्ञान के क्षेत्रों में चले गये हैं और दुर्भाग्यवश अनिवार्य रुप से आधार-विज्ञान के क्षेत्र में उनकी संख्या घटी है। स्वतंत्रता के बाद इतनी अधिक संख्या में संस्थान और विश्वविद्यालय खुलने पर भी हमें रमण और बसु नहीं प्राप्त हुए हैं; इसे मध्य-स्तरीयता की शुरुआत कह सकते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय श्रेष्ठता में सर्वोत्तम विद्यार्थियों को आकर्षित करने तथा उनको रोकने की तुलना में अभी आधार-ज्ञान के क्षेत्र में हमारा योगदान फीका है । वैज्ञानिकों तथा प्रौद्योगविदों के एक बड़े समुदाय के विचारों से अपना निष्कर्ष निकालते हुए अब्दुल कलाम अंततः खुश होंगे यदि हमारे युवा वैज्ञानिक विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में जुटे रहें और इसमें विश्वश्रेणी के ज्ञान को, जो कि अब उनको प्रौद्योगिक प्रगति के कारण उपलब्ध है, उपयोग में लायें और उद्योग-शिल्पियों के लाभ के लिए उसकी व्याख्या करें । इस विश्व श्रेणी के ज्ञान के योगदान हेतु तेज धार के विज्ञान पर कोई जागृत आधुनिक समाज अपना लक्ष्य निर्धारित करे, यह हमारी दृष्टि में कोई स्थान नहीं रखता (इंडिया 2020, ए विजन ऑफ द न्यू मिलेनियम, वाइकिंग, 1998, पृष्ठ 186) । यद्यपि इस पुस्तक के कई पृष्ठों से आशावाद का टपकना देखा जा सकता है । इसमें जो व्यथादायक तत्त्व है वह यह है कि यह हमारे देश के सारे वैज्ञानिक समुदायों की वर्तमान राय का प्रतिनिधित्व और अधिकृत रूप से विहंगावलोकन करता है । क्या हम अब्दुल कलाम की उम्मीदों को साकार कर सकते हैं ? कदाचित नहीं, जैसा कि मैं नीचे चर्चा कर रहा हूँ :-

मूलभूत-विज्ञान का मध्यम-स्तरीय होने का कारण :

प्रोफेसर श्रीवास्तव का चंद्रशेखर तथा खुराना के योगदान के प्रति रुख भारतीय वैज्ञानिक समुदायों के सभी स्तर के अति सामान्य राय का प्रतिनिधित्व करता है, और यह डॉ. कलाम के एक बड़े सर्वेक्षण पर आधारित मत के अनुरूप है और मध्य स्तरीय होने के मूल कारणों के विपरीत ठहरता है । वे कहते हैं - हम नहीं मानते कि एस. चंद्रशेखर और हर गोविंद खुराना का योगदान भारतीय विज्ञान का योगदान है. . . । वे कदाचित वास्तविक तौर पर सच हों पर निश्चय ही भावनात्मक रूप से नहीं । रामानुजम का हार्डी के साथ इंग्लैंड में किया गया वह सांकेतिक कार्य गणित में भारतीय योगदान नहीं समझा जा सकता । पता नहीं क्या प्रोफेसर को इससे अधिक गंभीर रूप से उलझने का अहसास है कि उन्होंने दुनिया में कहीं के व कदाचित् सबसे उत्तम अध्यापकों की धुरीय भूमिका को नष्ट कर डाला है, यद्यपि इन महान वैज्ञानिकों के मस्तिष्क को ढालने में वे उनसे कम ख्याति वाले हों । ये सब भारतीय अध्यापक हैं जो अब भी उनके विद्यार्थियों की परवाह करते हैं, परंतु लंबे समय से दुर्लभ रहने के कारण हमारे कीट-खाई समाज के उदासीन रवैये के कारण, यह उत्तरदायी अध्यापकों की जमात आपदायुक्त रहने की वजह से कम होती जा रही है और जल्दी ही लुप्त होने के कगार पर है । यह वास्तव में दुःख की बात है कि उस प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय के पूर्व एक उप-कुलपति को, जिसका नामकरण सर्वाधिक प्रबुद्ध व्यक्ति व राष्ट्र निर्माता जवाहरलाल नेहरु पर है, कथित संवेदन-शीलता पर शिक्षित करने की आवश्यकता हो जो उनके शिक्षाशास्त्री के पद की गरिमा के लिए अपेक्षित है ।

हमारे साधारण विद्वत्परिषद के सदस्यों के ऐसे रुख से बने विघटित (अवमूल्यित) वातावरण के बिलकुल अनुकूल होने के कारण यह अप्रत्याशित न होगा कि हम पश्चिम में प्रशिक्षित अपने प्रतिभावान युवा वैज्ञानिकों को भारतीय संस्थानों में आने पर उन्हें चरम रूप से विद्वेषपूर्ण रवैये का सामना करते हुए पायें और वे या तो छोड़ने के लिए बाध्य मिलें अथवा शेष हमारी तरह उस मध्यम-स्तरीय दबाव से पराभूत मिलें; बहुत बिरले ही इस पतन का सामना कर पाते हैं, पर अवश्य ही उन्हें इस बिना प्रेरणावाले वातावरण में कार्य जारी रखना पड़ता है ।

वैज्ञानिक समुदाय की निस्तब्धता उत्कृष्टता के वायदे की शीघ्र समाप्ति की ओर संकेत करती है जिसे संभवतः हमारे संस्थान प्रासंगिक तौर पर उपलब्ध करा सकते हैं । इसमें संदेह नहीं है कि हम पश्चिम से पीछे हैं और जब हम मध्यम-स्तरीय कार्यों को प्रोत्साहन देते हैं तो फलस्वरूप चंद्रशेखर या खुराना बन सकने वालों के बौद्धिक विकास पर रोक लगना स्वाभाविक है । मध्यम-स्तरियों का विस्तृत पालन-पोषण होता है एवं निश्चित रूप से गुणवत्ता घटाने वाला, आधारभूत विज्ञानों में अलक्षणीय रूप से

अधिक तथा ऐसे प्रयुक्त विज्ञानों में कम होता है - जिसमें एक यथेष्ट पिछड़ापन और साधारणतया निश्चित लक्ष्य-तिथि में देरी सामान्य रूप से स्वीकार्य होती है। यह आज अधिकतर संस्थानों और विश्वविद्यालयों के विकास का प्रधान अविरत तरीका बना हुआ है। यह अद्यपि पर्याप्त रूप से सराहा नहीं जाता तथापि मूलभूत विज्ञान में उत्कृष्टता की मांग के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसका कारण यह है कि प्रौद्योगिक विकास के प्रतिकूल कैरो भी पिछड़ना, यहां तक कि कुछ अवसरों पर एक हफ्ते का भी पिछड़ना कम से कम कुलीनों द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता। अत: मध्यम-स्तरीय होने का प्रभाव प्रौद्योगिक विकास की अपेक्षा मूलभूत-विज्ञानों में और अधिक रहता है। यदि इस प्रभाव पर विचार करें, तो भारत में मूलभूत विज्ञान की उपलब्धियां, कदाचित महत्त्वहीन नहीं हैं। बहरहाल प्रो. श्रीवास्तव के सुझावों के अनुसार उत्कृष्टता के केंद्रों की संख्या में बढ़ोतरी विज्ञान-उद्धरण-सूची (Citation index) में हमारी हिस्सेदारी में गिरावट नहीं रोक पायेगी जो कि हमारे मध्य-स्तरीय होने का परिणाम है।

हमारी प्रौद्योगिकी का भविष्य :

प्रौद्योगिकी की हमारी आधुनिक सफलताओं को अधिकतर पश्चिमी स्रोतों का अनुसरण या नकल कर प्राप्त किया गया है; हमने आधारभूत ज्ञान को, जिनसे ये उभर कर आते हैं, कोई सार्थक योगदान नहीं दिया। इस दुर्बलता को यदि बिना सुधारे छोड़ा जाता है तो यह हमारे भविष्य के प्रौद्योगिक विकास को केवल धीमा ही कर सकता है क्योंकि वर्तमान में करीब हरेक से लेकर सब वस्तुओं को पेटेंट कराने की चल रही होड़ के कारण हम अधिकाधिक पश्चिमी पेटेंट पर ही निर्भर होते जायेंगे जिससे नाजुक आधार-ज्ञान पर, जो कि भविष्य में उत्तम व नयी प्रौद्योगिकी के विकास के लिए आवश्यक है, नकाब पड़ जायेगा। अत: यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि उत्कृष्टता को सुनिश्चित किया जाय। भविष्य में अपने संस्थानों और विश्वविद्यालयों में स्वगृह के खुराना और चंद्रशेखरों के लिए और विदेश के प्रवासियों की इच्छित सुखद वापसी के लिए, हमें कार्यसंपादन के योग्य वातावरण निश्चय ही तैयार करना चाहिए। केवल तभी साधन-संपन्न बौद्धिक स्कूलों और परंपराओं का प्रादुर्भाव होगा। हम तभी यह आशा कर सकते हैं कि आधारभूत विज्ञानों में हमें "मेंढ़क-उछाल" जैसी सफलता मिलेगी। अन्यथा अब्दुल कलाम का "भारत 2020", हमारी क्षत-विक्षत सभ्यता को सांत्वना देने हेतु, एक और सर्वोत्तम वैदिक मूलग्रंथ बन कर रह जायगा। हमारे वैज्ञानिकों तथा शिक्षाविदों में व्याप्त वर्तमान रवैया, हमारे भविष्य के लिए एक हतोत्साहित करने वाला वातावरण ही तैयार कर रहा है।

इस लेख के हिंदी रूपांतरण के लिए मैं इटारसी के डॉ. बुद्धदेव चटर्जी का आभारी हूँ।

डॉ. स्वप्न कुमार भट्टाचार्जी
मॉलीक्यूलर बायोलाजी व कृषि प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085

-: "वैज्ञानिक" में विज्ञापन :-

हिंदी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में "वैज्ञानिक" अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सेमी x 21 सेमी है।

विज्ञापन की दरें (प्रति अंक)

अंतिम आवरण	: रू. 2,500/-	पूरा पृष्ठ	: रू. 1,500/-
दूसरा / तीसरा आवरण (अंदर)	: रू. 2,000/-	आधा पृष्ठ	: रू. 800/-

टिप्पणियां

1. पर्यावरण विघटन और हमारा दायित्व

1972 में स्कॉटहोम में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित विश्व पर्यावरण सम्मेलन में पर्यावरण की महत्ता को स्वीकार करते हुए यह निश्चय किया गया था कि हर वर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस मनाया जाय । तबसे 1999 तक पर्यावरण को सुधारने की कोशिशों के बावजूद यह चौतरफा और बिगड़ा है - फलस्वरूप इस पर टिकी आबादी का जीवन पहले से ज्यादा खतरे में पड़ गया है । उपरोक्त सम्मेलन में भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री ने विकसित राष्ट्रों को लक्ष्य करते हुए स्पष्ट कर दिया था कि प्रदूषण के लिए वे ही अधिक उत्तरदायी हैं क्योंकि गरीबी प्रदूषण का एक प्रधान कारण है । यह निर्विवाद सत्य है कि प्रदूषण और उससे उपजी असंतुलन की कड़ी न केवल गरीबी से बल्कि तेज गति से बढ़ने वाली जनसंख्या से भी जुड़ी है । अपने देश के संदर्भ में यह तथ्य और भी सही बैठता है ।

संतुलन का गणित :

यथार्थ में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण तथा पर्यावरण संतुलन बनाये रखना विकासशील देशों (जिसमें भारत भी शामिल है) के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण आवश्यकता है । सिंचाई, विद्युत और बढ़ती आबादी के उपयोग के लिए पानी की जरुरत दिनोंदिन बढ़ती जा रही है परंतु नदियों, कुओं के जल का स्तर निरंतर कम होता जा रहा है ।

यह सब जंगलों की अधिक कटाई तथा उससे उत्पन्न भारी भू-क्षरण के कारण हो रहा है फलतः धरती की उपजाऊ सतह तेजी से कम होती जा रही है । अमरीका के पर्यावरण शास्त्री लेस्टर ब्राऊन का कहना है कि मानव सभ्यता तेल भंडार का चुकना सह सकती है परंतु मिट्टी की उपजाऊ सतह का लगातार बर्बाद होना नहीं । संपूर्ण तीसरी दुनिया, मध्य पश्चिमी अमरीकी एवं रूस के ढलानी क्षेत्र, जो अत्यधिक उपजाऊ क्षेत्र रहे हैं, में अब अन्न पैदावार क्रमशः घट रहा है ।

वन संरक्षण का यथार्थ :

वनों की कटाई का सीधा संबंध ईंधन की आवश्यकता पूर्ति से है । खाद्य एवं कृषि संगठन के एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग 10 प्रतिशत कुटुंब लकड़ी, गोबर और कृषीय अवशिष्ट का इस्तेमाल, लगभग बीस करोड़ टन प्रतिवर्ष की दर से अपनी खाद्य सामग्रियों को पकाने के लिए कर रहा है । इसी से मिलता-जुलता अनुमान योजना आयोग द्वारा गठित 'फ्यूलवुड स्टडी कमेटी' के रिपोर्ट में भी है । उसके अनुसार बतौर ईंधन इस्तेमाल के लिए भारत को जलाऊ लकड़ी की आवश्यकता लगभग चौदह करोड़ टन प्रतिवर्ष है जबकि वृक्षारोपण, वन संरक्षण, सामाजिक वानिकी आदि के नाम पर जितनी भी परियोजनाएं चालू एवं प्रस्तावित हैं उन सबके सफलता पूर्वक संचालित रहने के बावजूद प्रतिवर्ष हमें दस करोड़ टन जलाऊ लकड़ी का संकट झेलना पड़ेगा । रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि सूखे गोबर के कुल प्राक्कलित उत्पादन 33 करोड़ टन है सात करोड़ टन खाना बनाने में खर्च हो जाता है जो कि घरेलू उपयोग में आने वाली समग्र ऊर्जा का पंद्रह प्रतिशत है । भारत के ग्रामीण हिस्सों के 11 करोड़ कुटुंबों में रह रही जनसंख्या का 84 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों के तीन करोड़ कुटुंबों में रह रही जनसंख्या का 65 प्रतिशत अभी भी जलाऊ लकड़ी का इस्तेमाल ठोस ईंधन के रूप में कर रहा है ।

ऊर्जा की बढ़ती मांग ने जहां हमारे वनों का विनाश किया है वहीं जल विद्युत केंद्रों के जलाशयों की जल संग्रहण क्षमता को कम भी किया है । पेड़ों के अभाव में अधिकाधिक अवसादों का जमाव इन जलाशयों में हुआ है फलस्वरूप इससे विद्युज्जनन पर कुप्रभाव पड़ा है । नागार्जुन सागर, हीराकुंड, रिहंद तथा भाखड़ा के जलाशयों की संग्रहण क्षमता में पचास प्रतिशत की कमी हुई है । अकेले निजाम-सागर की संग्रहण क्षमता 900 घनमीटर से घटकर 300 घनमीटर रह गयी है ।

जनस्वास्थ्य पर कुप्रभाव :

यह सत्य है कि भारत में जब तक जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति को नियोजित नहीं किया जा सकता तब

तक कोई भी आर्थिक-सामाजिक मॉडल पर्यावरण असंतुलन को फिर से संतुलित नहीं कर पायेगा। नेशनल इंस्टट्यूट ऑफ ओसेनोग्राफी एवं नेशनल इंस्टट्यूट ऑफ आक्यूपेशनल हेल्थ द्वारा नर्मदा नदी के प्रदूषण पर किये गये एक अध्ययन का निष्कर्ष है कि भड़ौच शहर तक प्रदूषण नियंत्रण में है पर उसके बाद औद्योगिक इकाइयों द्वारा गंदे एवं बचे रासायनिक तत्त्वों को बिना किसी नियंत्रण के नर्मदा में मिलने से जल प्रदूषित हुआ है।

कर्नाटक का रायचूर जिला जो एक समय मलेरिया मुक्त था, तुंगभद्रा जल परियोजना के बाद मलेरिया ग्रसित इलाका बन गया है। पर्यावरण विशेषज्ञों ने नागार्जुन सागर बांध क्षेत्र में होनेवाली घुटनों की बीमारी को वहां के पानी में फ्लोराइड स्तर के बढ़ जाने से जोड़ा है। वहां विकास कार्यों से जीवन स्तर में वृद्धि तो हुई परंतु विकास जनित पर्यावरण असंतुलन ने स्वास्थ्य समस्याओं को भी जन्म दे दिया।

अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के डॉ. रामालिंगास्वामी ने इस तरह के विकास जनित पर्यावरण असंतुलन एवं प्राकृतिक संपदा क्षय से होनेवाले स्वास्थ्य प्रभावों को विस्तार से स्पष्ट किया है। उनका कहना है कि सारावती घाटी (कर्नाटक) अंचल में जल विद्युत परियोजनाओं के विकास के दौरान कायसनूर के घने जंगल अंधाधुंध काटे गये, परिणामस्वरूप एक नयी बीमारी "कायसनूर फॉरेस्ट डिसीज" फैल रही है। इन्हीं पर्यावरण संबंधी स्वास्थ्य प्रभावों के विशद विश्लेषण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी, पर्यावरण कार्यक्रम के तहत् एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार करवायी है। इस रिपोर्ट में स्पष्ट संकेत हैं कि हृदय रोग के बाद कैंसर ही ऐसा दूसरा घातक रोग है जिसका प्रमुख कारण हमारा पर्यावरण है।

पर्यावरण असंतुलन एवं प्रदूषण की विनाश-लीलाएं अपने पूर्ण घातक रूप में अभी हमारे सम्मुख नहीं आयी हैं। जिन विकसित एवं विकासशील देशों में आयी हैं वे प्रकृति के विध्वंसकारी तांडव को झेल रहे हैं। अतः हम अंतर्मुखी होकर अपनी समस्याओं पर चिंतन करें व अपने जिंदा रहने व सही विकास तथा पर्यावरण संतुलन का हल स्वयं खोजें। विनाशलीला की प्रतीक्षा करने के बजाय हम पहले से ही सतर्क हो जायें तो प्राकृतिक विपदा से बच जायेंगे अन्यथा तेजाबी वर्षा एक दिन हमारी भी दहलीज पर आ खड़ी होगी।

डॉ. अवधेश शर्मा
वैज्ञानिक, केंद्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान,
पो. बॉ - 41,
बिलासपुर (म. प्र.) - 495 001

2. लेग्युमिनस (फलीदार) पौधों से प्राकृतिक रंगों का उत्पादन

रंगों के प्रति मनुष्य का आकर्षण आदिकाल से ही रहा है। पहले प्राकृतिक रंगों की उत्पादन प्रक्रिया एवं इनके उपयोग की तकनीक आज की तरह वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित नहीं थी। 19 वीं शताब्दी में लोगों ने प्राकृतिक रंगों की जगह संश्लेषित रंगों को अपना लिया। इसका मुख्य कारण यह था कि ये संश्लेषित रंग अपेक्षाकृत सस्ते तथा अनेक भड़कीले रंगों में उपलब्ध हो गये थे परंतु आज लोग पर्यावरण के प्रति पूरी तरह जागरूक तथा संश्लेषित रंगों से उत्पन्न स्वास्थ्य पर होने वाले प्रभाव के कारण फिर से प्राकृतिक रंगों के उपयोग की बात सोचने लगे हैं।

प्राकृतिक रंग प्राप्त करने के अनेक स्रोत हैं जैसे पेड़-पौधे, खनिज, कीट तथा पशु इत्यादि। भारत वर्ष प्राकृतिक संपदा के संदर्भ में अत्यंत समृद्धिशाली देश है, तथा रंग उत्पादन के लिए प्रचुर मात्रा में यहां कच्चा माल उपलब्ध है।

अब प्राकृतिक रंगों की मांग सभी देशों में है, विशेषकर पश्चिमी देशों में तो संश्लेषित रंगों के उत्पादन एवं उपयोग पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगा दिया है। अतः हम सभी को इसकी बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए गंभीरता से विचार करना चाहिए तथा इनके नये स्रोतों को खोजने तथा रंगों के व्यावसायिक उत्पादन के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए।

पेड़-पौधों के संसार में लेग्युमिनोसी कुल बहुत ही महत्वपूर्ण एवं परिचित परिवार है। इसके लगभग 650 वंश (जेनेरा) तथा 18,000 प्रजातियां हैं। लेग्युमिनोसी

परिवार के पौधे अपने अनेक उपयोगी प्राकृतिक उत्पादनों जैसे गोंद, औषधियों, रंग, चारा, ईंधन, हरी खाद, कपड़ा, सौंदर्य प्रसाधन, कागज तथा खाद्य सामग्री आदि उद्योगों में बहुतायत उपयोग के लिए प्रख्यात हैं। प्राकृतिक रंग पेड़ पौधों के विभिन्न भागों जैसे पत्ती, तना, छाल, जल, लकड़ी, फूल तथा बीज से प्राप्त किये जाते हैं।

स्रोत :

कुछ फलीदार पौधे जो प्राकृतिक रंग उत्पादन के प्रमुख स्रोत हैं, निम्नलिखित तालिका में दिये गये हैं।

तालिका : प्राकृतिक रंग उत्पादक लेग्युमिनस प्रजातियाँ

स्रोत	प्रचलित नाम	उपयोगी भाग	रंग
अकेशिया फर्नेसियाना	बबूल	फली, बीज	भूरा
अकेशिया ल्यूकोफोलिया	सफेद कीकर	पत्तियाँ	काला
ऐल्बिजिया लैबैक	सिरिस	छाल	भूरा
ऐल्बिजिया ओजोरेटीसिमा	काला सिरिस	छाल	भूरा
अकेशिया चुन्डरा (रोम्सव)	लाल खैर	लकड़ी	टेनिन
अकेशिया कटेचू	खैर	लकड़ी	कत्थई
अकेशिया नीलोटिका	बबूल	छाल	भूरा
अकेशिया पिनारा	ऐला	छाल	भूरा
ऐडिनेनथिरा पावोनिया	रक्त कमल	लकड़ी	लाल
बहूनिया टोमेन्टोसा	कचनार	पत्तियाँ	पीला
ब्यूटिया सुपर्व	पलास लता	फूल	नारंगी
ब्यूटिया मोनोस्पर्म	टेसू	फूल	पीला
बहूनिया बैराइमाटा	कचनार	फूल	भूरा
सेजैलपिनिया कोरियेरिया	देवी देवी	बीज	काला
सेजैलपिनिया पुलचेरिमा	गुलतोरा	फूल	लाल
सेजैलपिनिया सपन	पतंग	लकड़ी	लाल
केशिया आरिकुलेटा	टैनर्स केशिया	छाल, फूल	काला
केशिया फिस्टुला	अमलतास	फली, फूल	भूरा, पीला
केशिया आक्टुसीफोलिया	पनवार	फली, बीज	पीला
केशिया आक्सीडेन्टलिस	कसौंदी	बीज	पीला, भूरा
केशिया तोरा	पनवार	बीज	पीला
क्लाईटोरिया टर्नेटिया	मटर	फूल	नीलहरित
कोटालेरिया मकोनेटा	सन	बीज, फूल	भूरा
सायमॉप्सिस टेट्रागोनोलोबा	ग्वार	फली,	पीला
डेलोनिक्स रेजिया	गोल्डमोहर (गुलमोहर)	फूल, बीज	नारंगी
एरिथ्रीना वैराइगेटा	भारतीय कोपल	पत्ती, छाल	लाल

तालिका अगले पृष्ठ पर जारी. . .

तालिका . . .

स्रोत	प्रचलित नाम	उपयोगी भाग	रंग
हेमैटॉक्सिलान कॅम्पेचिएनम	लागवुड	लकड़ी	लाल
इंडिमोफिरा आर्टिकुलेट	इजिप्सियन इंडिमो	पूरा पौधा	नीला
इंडिगोफिरा अरेक्टा	बेंगल इंडिमो	पूरा पौधा	नीला
इंडिगोफिरा हर्सुटा	हैरी इंडिमो	पूरा पौधा	नीला
इंडिगोफिरा टिक्टोरिया	इंडियन इंडिमो	पूरा पौधा	नीला
मोघेनिया ग्राहामिया	वॅरस	बीज	नारंगी
मोघेनिया मैक्रोफीलिया	सत्पान	बीज	नारंगी
पेल्टोफोरम टेरोकार्पम	कोंडाचिन्टा	छाल	पीला
पिथेसेलोबियम डल्सी	जंगल जलेबी	छाल	पीला
पेटरोकार्पस इंडिकस	वेन्जाई	लकड़ी	लाल
पेटरोकार्पस सेन्टेलिनस	लाल चंदन	लकड़ी	गुलाबी
सस्वनिया बाइस्थिनासा	ढैंचा	फली, बीज	पीला
सोफेरा जॅपोनिका	सिस्ट्रस ट्री	फूल	पीला
टैमेरिन्डस इंडिका	इमली, टैमारिंड	पत्ती, फली	पीला, भूरा

तालिका में दर्शायी गयी लेग्युमिनस पौधों की प्रजातियों के अतिरिक्त भी अन्य कई ऐसे लेग्युमिनस प्रजातियों के अनुपयोगी भाग, जो कि प्राकृतिक रंगों के महत्वपूर्ण स्रोत सिद्ध हो सकते हैं, निम्नलिखित हैं :

केसिया टोरालिन (पवांर) :

केसिया टोरालिन एक वार्षिक पौधा है तथा प्राकृतिक गोंद का एक व्यावसायिक स्रोत है । इसके बीजों में निहित भ्रूणपोष में प्रचुर मात्रा में गोंद पाया जाता है । गोंद उत्पादन के पश्चात बीज का शेष भाग या तो पशुओं के आहार के रूप में उपयोग होता है अन्यथा कठोर हो जाता है । परंतु यह लगभग अविदित है कि केसिया टोरा के बीजों से प्राकृतिक रंग भी प्राप्त होता है । रंग प्राप्त करने के लिए बीजों को महीन पीसकर इनका पानी या उचित घोलक के साथ निथारन किया जाता है इससे प्राप्त पीले रंग का उपयोग विभिन्न रंग बंधकों के साथ धागे व कपड़े रंगने में किया जाता है ।

केसिया पिस्टुला लिन (अमलतास) :

लेग्युमिनस कुल का यह पेड़ गर्मी के मौसम में अपने पीले गुच्छेदार फूलों के लिए प्रसिद्ध है । अमलतास की कलियां बहुपयोगी होती हैं इनके बीजों में निहित भ्रूणपोष में पर्याप्त मात्रा में गोंद होता है । शेष फली व गूदा प्राकृतिक रंग का एक महत्वपूर्ण स्रोत है पानी के साथ इसका निष्पादन करके गहरा भूरा रंग प्राप्त होता है तथा विभिन्न रंगाई कार्यों में उपयोग किया जाता है । इसके पीले फूल भी रंग उत्पादन का स्रोत हैं । इनसे पीला रंग प्राप्त होता है ।

टेमेरिन्डस इंडिका लिन (इमली) :

इमली के बीजों को पहले ही व्यावसायिक गोंद का स्रोत सिद्ध किया जा चुका है । यह गोंद अंतर्राष्ट्रीय बाजार में टैमेरिन्ड कर्नल पाउडर (टी.के.पी.) के नाम से विख्यात है । गोंद उत्पादन के समय भ्रूणपोष को छोड़कर बीज का शेष भाग बेकार हो जाता है । यह बेकार भाग प्राकृतिक रंग उत्पादन का एक अच्छा स्रोत है । पानी के साथ निस्तारण से रंग प्राप्त होता है, जो रंगाई में प्रयुक्त किया जाता है ।

सुभाष चंद्र एवं वी. पी. कपूर
पादप रसायन विभाग, राष्ट्रीय वनस्पति
अनुसंधान संस्थान, लखनऊ - 226 001

3. हिंदी की उपेक्षित विधा है विज्ञान कथा साहित्य

माइकल क्रिचटन ने एक उपन्यास लिखा है "जुरासिक पार्क" । इस वैज्ञानिक उपन्यास पर स्पीलवर्ग ने जो फिल्म बनायी उसने सारी दुनिया में तहलका मचा दिया । हिंदी भाषी क्षेत्रों में संभवत: यह पहली विदेशी फिल्म है, जिसे करोड़ों लोगों ने देखा और सराहा । विज्ञान कथा पर आधारित इस फिल्म ने साबित कर दिया है कि आज आदमी साहित्य के परंपरागत ढर्रे से अलग कुछ और जानना, समझना और देखना चाहता है। वह कल्पना के नये-नये लोकों में विचरण करना चाहता है ।

जुरासिक पार्क के पूर्व भी विदेशों में विज्ञान कथाओं पर दर्जनों फिल्में बनी हैं और लोकप्रिय भी हुई हैं । एच. जी. वेल्स के लिखे कथानक पर 'टाइम मशीन', स्टेनले कब्रिक के 'स्पेस ओडिसी' तथा एडगर एलन पी के चर्चित कथानकों पर रोचक फिल्में बनी हैं । इसी तरह 'लोलैरिस', 'स्टार वार्स', 'क्लोज एनकाउंटर्स ऑफ थर्ड काइंड' एवं अंतरिक्षवासियों पर बनी कुछ फिल्मों ने पश्चिमी जगत में अच्छी खासी लोकप्रियता हासिल की । विज्ञान जगत पर आधारित इन फिल्मों की लोकप्रियता का कारण फिल्म निर्माण की कोई विशिष्ट शैली नहीं अपितु वहां उपलब्ध प्रचुर विज्ञान कथा साहित्य और जनता में विज्ञान के प्रति बढ़ती ललक ही इसका प्रमुख कारण रहा है ।

इसके विपरीत हमारे यहां हिंदी के शीर्षस्थ साहित्यकार अभी इसी पचड़े में पड़े हैं कि विज्ञान लेखन को साहित्य माना जाये या नहीं । कहानी, कविता, उपन्यास लिखने वाले बड़े-बड़े पुरस्कारों से सम्मानित होते हैं, जबकि अच्छे से अच्छे विज्ञान लेखक की साहित्य के क्षेत्र में चर्चा तक नहीं होती । ऐसी स्थिति में हिंदी विज्ञान कथाकारों का अभाव कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है । फिर भी स्थिति निराशाजनक नहीं है । बाबू देवकीनंदन खत्री ने तिलिस्म और चमत्कार से परिपूर्ण जो उपन्यास लिखे आगे चलकर वही विधा विज्ञान कथाओं की ओर मुड़ी । जिसका परिणाम है कि हिंदी में अनेक विज्ञान कथाएं लिखी गयीं और लिखी जा रही हैं । इससे एक नया पाठक वर्ग तैयार हो रहा है जो परंपरागत ढर्रे से अलग रहस्य, रोमांच और चमत्कारपूर्ण घटनाओं वाले साहित्य की मांग करने लगा । इसीलिए खत्री जी के बाद हरे कृष्ण जौहर, किशोर लाल गोस्वामी तथा देवकीनंदन खत्री के पुत्र दुर्गा प्रसाद खत्री ने अनेक तिलिस्मी उपन्यास लिखे जिनमें अनेकों की पृष्ठभूमि में विज्ञान संबंधी चमत्कार भी शामिल थे ।

आधुनिक विज्ञान उपन्यासों की शुरुआत 1953 से मानी जाती है । जब डॉ. संपूर्णानंद का लघु उपन्यास 'पृथ्वी से सप्तर्षि मंडल' प्रकाशित हुआ । 1956 में ओम प्रकाश शर्मा का बड़ा उपन्यास 'मंगल यात्रा' प्रकाशित हुआ । हिंदी का यह पहला उपन्यास है जो विदेशी वैज्ञानिक उपन्यासों की टक्कर का था । आचार्य चतुरसेन के 'खग्रास' तथा राहुल सांकृत्यायन के उपन्यास 'विस्मृति के गर्भ' भी उल्लेखनीय हैं ।

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा के बाद विज्ञान कथाओं के क्षेत्र में डॉ. नवल बिहारी मिश्र ने 'विज्ञान लोक' तथा 'विज्ञान जगत' में नियमित विज्ञान कथाएं लिखीं ।1962-63 में उनका उपन्यास 'अपराध का पुरस्कार' विज्ञान जगत में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ । 60 और 70 के दशक में विष्णु दत्त शर्मा और रमेश वर्मा भी उल्लेखनीय विज्ञान लेखक रहे हैं । विष्णु दत्त शर्मा के 'प्रतिध्वनि' तथा 'आकर्षण' तथा रमेश वर्मा के अंतरिक्ष स्पर्श, सिंदूरी ग्रह की यात्रा, अंतरिक्ष के कीड़े आदि उल्लेखनीय लेख हैं ।

अस्सी और नब्बे के दशक में रमेश दत्त शर्मा ने अनेक रोचक विज्ञान कथाएं लिखीं । कई मासिक पत्रिकाओं ने तो बाकायदा विज्ञान कथा विशेषांक ही निकाले । "नंदन" (1969), "पराग" (1975 एवं 1984) "विज्ञान प्रगति" (1978), "धर्मयुग" (1980), "मेला" (1981), "विज्ञान" (1989), "साप्ताहिक हिंदुस्तान" (सितंबर 1981) तथा "सारिका" (सितंबर 1981) के विज्ञान विशेषांक दृष्टव्य हैं ।

हिंदी में विज्ञान कथा लेखन के क्षेत्र में उचित वातावरण बनाने में अनूदित साहित्य ने उल्लेखनीय योगदान

दिया है । "सारिका" के सितंबर 1985 के अंक में प्रकाशित अरुण साधू लिखित 'विस्फोट' (मराठी), मोहन संजीवन लिखित 'मैं मरना चाहता हूँ' (तमिल), राशेल कार्सन के प्रसिद्ध उपन्यास 'द साइलेंट स्प्रिंग', गुणाकर मुले ने आसिमोव का 'शिशु रोबोट,' विक्टर कोमारोव का 'दूसरी धरती', गोर बिडाल के 'छुद्रग्रह' । प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक डॉ. जयंत विष्णु नार्लिकर के वैज्ञानिक उपन्यास 'धूमकेतु' और 'वयं रक्षामः' (मराठी) आदि के हिंदी रुपांतर हिंदी जगत में काफी लोकप्रिय हुए हैं ।

हिंदी की अपेक्षा अन्य कुछ भारतीय भाषाओं में विज्ञान कथा साहित्य ज्यादा समृद्ध है । आयूका, पुणे के निदेशक तथा खगोल भौतिकी के प्रोफेसर डॉ. जयंत विष्णु नार्लीकर ने अपने वैज्ञानिक उपन्यास मराठी में लिखे हैं । इन उपन्यासों के हिंदी अनुवाद बहुत लोकप्रिय हुए हैं । आज मराठी, बांग्ला, तमिल, तेलगु की पत्र पत्रिकाओं में हिंदी की अपेक्षा अधिक विज्ञान कथाएं लिखी जा रही हैं ।

मराठी में "नवल" पत्रिका के संपादक अनंत अंतरकर मराठी विज्ञान कथा के प्रवर्तक माने जाते हैं । डी. पी. खवटे का कथा संग्रह 'मांझ नाव रमाकांत पालवकर' मराठी विज्ञान कथा साहित्य की नींव कहा जाता है । बंगला में पहली विज्ञान कथा 'ह-ज-ब-ल-र' प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक सत्यजित राय के पिता सुकुमार राय ने लिखी थी । यह कथा लेविस कैरोल की 'एलिस इन वंडरलैंड' से प्रभावित थी । सुकुमार राय की 'प्रोफेसर हेशोराम होशियार', प्रेमेंद्र मिश्र की 'खोनाडा' नामक विज्ञान कथा तथा राय इन्स्टीट्यूट मुंबई के प्रोफेसर सुकुमार विश्वास की 'ओ कलकत्ता' में अंतरिक्ष में मानव बस्ती की अवधारणा पर लिखा उपन्यास काफी चर्चित रहा ।

हिंदी की स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में आजकल अक्सर विज्ञान कथाएं देखने को मिल जाती हैं । यह स्वागत योग्य कदम है । लेकिन इनमें ज्यादातर वास्तव में विज्ञान कथाएं नहीं हैं । इन्हें विज्ञान गल्प कहा जा सकता है । विज्ञान कथाएं ठोस वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होती हैं जबकि विज्ञान गल्प में वैज्ञानिक तथ्य कम कल्पना की उड़ान अधिक होती है । इस संबंध में सबसे बड़ा दायित्व विज्ञान लेखकों का है । यदि वे खुद कलम नहीं चलायेंगे तो भला विज्ञान कथाएं कैसे लिखी जायेंगी ? ललित साहित्य का रचनाकार भला विज्ञान कथाएं कैसे लिख पायेगा ? उसे तो वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी ही नहीं होती ।

विजय चितौरी
घूरपुर, इलाहाबाद, - 212 110

4. सौंदर्य प्रसाधनों के बढ़ते खतरे

हमारे दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में रसायनों का बोलबाला है । आजकल पाउडर, क्रीम, नाखून-पॉलिश, विभिन्न प्रकार के साबुन, केशवर्धक तेल, बालों को रंगने के रोगन, हेयर रिमूवर आदि सौंदर्य-प्रसाधन सामग्रियाँ आज की सभ्यता के अंग बन चुके हैं । इन्हें सभी युवक, युवतियाँ, प्रौढ़ तथा वृद्ध तक इन प्रसाधनों का उपयोग करते हैं । परंतु वे इन रसायनों से होने वाले दुष्प्रभावों से अवगत नहीं हैं । लुभावने नित-नये विज्ञापनों के चक्कर में आकर उपभोक्ता कई रोगों के शिकार बन रहे हैं ।

वस्तुतः इन प्रसाधनों में प्रयुक्त होने वाले कृत्रिम रसायनों के अग्रांकित दुष्प्रभाव शरीर पर दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे - त्वचा की एलर्जी, त्वचा के रंग पर प्रभाव, मुहांसे बढ़ने की प्रवृत्ति आदि । त्वचा पर एलर्जी उत्पन्न करने वाले सौंदर्य प्रसाधनों में प्रमुख हैं, चेहरे पर लगानेवाले सौंदर्य प्रसाधन जैसे - क्रीम, मॉयस्चराइजर, फाउंडेशन, ब्लीचिंग क्रीम, धूप से बचाने वाली क्रीम, लोशन तथा आंखों के लिए काम में आने वाले सौंदर्य प्रसाधन जैसे मस्करा, आईलाइनर आदि । इन प्रसाधनों में प्रायः सुगंध वाले पदार्थ प्रयोग किये जाते हैं । बहुत से व्यक्ति इन पदार्थों के प्रति अधिक संवेदनशील होने के कारण एलर्जी के रोगी बन सकते हैं । इस प्रकार की एलर्जी त्वचा पर एक्जिमा का रुप ले सकती है, जिससे चेहरे की त्वचा पर छोटे-छोटे खुजली वाले दाने या पानी वाले दाने हो सकते हैं । एक्जिमा त्वचा का वह शोथ है, जो कि त्वचा की कोशिकाओं के बीच की

खाली जगहों में किसी द्रव पदार्थ के प्रविष्ट होने से होता है । इसकी शुरुआत खुजली उत्पन्न करने वाले चकते से ही होती है, जो बढ़कर रिसनेवाले फफोले में परिवर्तित हो जाती है ।

होठों की लाली स्त्रियों के द्वारा प्रयुक्त होनेवाली सर्वाधिक लोकप्रिय प्रसाधन सामग्री है । इसमें क्रीम या मोम में वांछित रंग मिले रहते हैं । रंगों के लिए प्रायः ऐनिलीन रंजक, मरक्यूरोक्रोम, लाक्षाएं तथा ब्रोमो अम्ल काम में लाये जाते हैं । स्मरण रहे मात्र लाक्षाओं के सभी विषैले रसायन होते हैं जिनका प्रयोग कटे-फटे होठों पर वर्जित है ।

केशों या बालों की सुरक्षा के लिए तथा उन्हें आकर्षक बनाने के लिए शैंपू, टॉनिक, रंजक तथा तेल मिलते हैं । शैंपू का प्रयोग बालों को अच्छी तरह से साफ करके उन्हें मुलायम तथा चमकीला बनाने के लिए होता है । वस्तुतः यह शैंपू साबुन ही है जिसमें ऐल्कोहल मिला रहता है । कभी-कभी कुछ शैंपू बालों की जड़ों को भी कमजोर कर देते हैं तथा उनके प्रयोग से बाल झड़ने की शिकायत भी हो सकती है । कुछ शैंपू जिनमें जिंक पायोरोथिन नाम का पदार्थ उपयोग किया जाता है, को लंबे समय तक प्रयोग करने से मांस-पेशियों तथा नसों पर भी कुप्रभाव पड़ता है ।

बालों को रंगने के लिए खिजाबों का प्रयोग प्राचीनकाल से होता रहा है । इनका प्रयोग दो उद्देश्यों से किया जाता है - अधिक आयु में भी नौजवान दिखाई पड़ना तथा अपने रुप को आकर्षक बनाना । जिनके भरी जवानी में ही बाल सफेद होने लगते हैं, वे उन्हें काला बनाने के लिए अनेक विरंजक पदार्थों तथा रंजकों का उपयोग करते हैं । इन रंजकों में प्रमुख है - "पैरपिथीलीन डाईएमीन" नाम का पदार्थ जो कि एलर्जी के लिए जिम्मेदार होता है । इससे आंखों पर खुजली, सूजन तथा चेहरे पर एक्जिमा भी हो सकता है । बालों को रंगने के लिए मेहंदी निश्चित रुप से स्थाई रंजक है । अन्य रंजकों के उपयोग से कैंसर की संभावना बढ़ जाती है ।

नेल पालिश या नाखून पालिश में पहले मात्र टिन-ऑक्साइड तथा टैल्क मिले रहते थे, परंतु आजकल की पालिश में टोल्यून सल्फोनेमाइड नाम का पदार्थ, जो गीली नाखून पालिश में रेसिन के तौर पर प्रयुक्त किया जाता है, एलर्जी का प्रमुख कारण है । बहुत से सौंदर्य प्रसाधन धूप की एलर्जी भी कर सकते हैं । अत्यधिक सुगंध वाले नहाने के साबुन, लिपिस्टिक भी ऐसे ही पदार्थों की श्रेणी में आते हैं । त्वचा के जिस भाग पर ये लगाये जाते हैं, उस भाग पर धूप के संपर्क में आने के बाद उस प्रसाधन से एक्जिमा होने की संभावना रहती है ।

इसी प्रकार ललाट पर प्रयोग की जानेवाली विभिन्न प्रकार की चिपकाने वाली बिंदियां भी एलर्जी का कारण बन जाती हैं क्योंकि चिपकने वाली बिंदी में पैरा टरशर्ा, ब्यूटॉल फिनोल नामक रासायनिक पदार्थ होता है, जो बिंदीवाली जगह पर ल्यूकोडर्मा अथवा सफेद दाग कर सकता है । आजकल बाजार में इसी प्रकार की बिंदियों का प्रचलन बढ़ रहा है । अतः सिंदूरवाली बिंदी चिपकाने वाली बिंदी से अधिक सुरक्षित है ।

कई महिलाएं चेहरे को साफ अथवा गोरा रखने के लिए ब्लीचिंग क्रीम का उपयोग करती हैं, इस ब्लीचिंग क्रीम में मुख्यतः हाइड्रोक्यूनोन नामक पदार्थ होता है । कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि ब्लीचिंग क्रीम के प्रयोग से कुछ लोगों में चेहरे की त्वचा का रंग साफ होने की बजाय और गहरा तथा काला हो जाता है । अतः यह जरुरी है कि कुछ दिनों के प्रयोग के बाद यदि त्वचा के रंग में कोई परिवर्तन नहीं आता है, तो ब्लीचिंग क्रीम का प्रयोग बंद कर देना चाहिए ।

सौंदर्य प्रसाधनों के प्रयोग से चेहरे पर मुंहासे भी बढ़ सकते हैं । साधारणतया देखा गया है कि मुहासे की प्रवृत्ति 27-28 वर्ष की आयु के पश्चात कम हो जाती है, परंतु कई व्यक्तियों में यह 30-32 वर्ष के बाद भी ये निकलते रहते हैं । त्वचा पर कुछ चिकनाई वाले सौंदर्य प्रसाधनों के प्रयोग से मुहांसे बढ़ जाते हैं । ऐसे कुछ पदार्थ हैं - लेनानिन, पेट्रोलेटम, प्रोपिटिन ग्लाइकोल तथा कुछ परिरक्षक । जिन व्यक्तियों में मुंहासे निकलने की प्रवृत्ति रहती है, उन्हें निश्चित तौर पर चिकनाई वाले सौंदर्य प्रसाधनों के प्रयोग से बचना चाहिए । चेहरे पर सरसों के तेल की मालिश करने से भी मुंहासे बढ़ सकते

हैं। बालसफा या हेयर-रिमूवर भी प्राय: पाउडर या क्रीम के रूप में दुर्गंधयुक्त रासायनिक पदार्थ होते हैं जो बालों को तो साफ कर देंगे परंतु गुप्तांगों की मुलायम त्वचा को हानि भी पहुंचाते हैं। ये बेरियम सल्फाइड, कैल्सियम सल्फाइड अथवा स्ट्रॉंशियम सल्फाइड से युक्त पाउडर या क्रीम होते हैं। इनके साथ यदि थेलियम ऐसीटेट मिला दिया जाय ते 12 से 18 माह तक बाल नहीं उगते हैं, परंतु इनसे कभी-कभी अंधता एवं पक्षाघात जैसे रोग भी हो सकते हैं।

कई विज्ञापन यह दावा करते हैं उनके द्वारा निर्मित दंतमंजन मुंह के कीटाणु या पायरिया जैसे रोग दूर करते हैं, वस्तुत: ऐसा नहीं होता है। दंतमंजनों का कोई गुप्त नुस्खा नहीं होता है। सभी में समान रूप से खड़िया, साबुन, शर्करा, सैकरीन तथा सुगंधियाँ मिली रहती है। इनसे मिलकर पाउडर बनते हैं। यदि इनमें जल, ग्लिसरीन अथवा शहद मिला दिया जाय तो पेस्ट बनते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि कभी भी मिट्टी या बालू से दातों को साफ नहीं करना चाहिए। अत: हमें सौंदर्य प्रसाधनों का प्रयोग विवेक से ही करना चाहिए तथा जहां तक संभव हो इन विषैले रसायनों से दूर रहना ही श्रेयस्कर रहता है।

डॉ. डी. डी. ओझा
गुरुकृपा, ब्रह्मपुरी, हजारी चबूतरा,
जोधपुर - 342 001

5. कृषि एवं पशुपालन में केंचुओं का महत्त्व

अकार्बनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरा शक्ति व गुणवत्ता में प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। कार्बनिक उर्वरकों से की गयी खेती के उत्पादों की तुलना में गुणवत्ता की दृष्टि से काफी उत्तम पाये गये हैं। यही कारण है कि आजकल विदेशों में, यहाँ तक कि भारत वर्ष में भी कार्बनिक उत्पादों के विक्रय केंद्र खोले जाने लगे हैं। भारत में इस तरह का प्रथम विक्रय केंद्र देश की राजधानी दिल्ली में खोला गया है जहाँ कार्बनिक खेती द्वारा उगाये गये कृषि उत्पाद बेचे जाते हैं।

केंचुआ, कार्बनिक एवं परंपरागत खेती के लिए एक सचल संयंत्र का कार्य करता है। केंचुआ, जीवन पर्यंत मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता रहता है और मरने के पश्चात भी इसके मृत शरीर से निकलने वाला नाइट्रोजन मिट्टी को उपजाऊ बनाता है तथा कृषि उत्पादों की गुणवत्ता को भी बढ़ाता है।

कार्बनिक खेती में केंचुए की बढ़ती उपयोगिता को देखते हुए कृषि वैज्ञानिक आजकल इसकी विभिन्न प्रजातियों पर शोध कर नयी प्रजातियों को विकसित करने में कार्यरत हैं। नीदरलैंड के वैज्ञानिकों ने केंचुओं की कई संकर प्रजातियों का विकास किया है क्योंकि ये केंचुए मृदा के ह्यूमिफिकेशन, जल धारक क्षमता व उपयुक्त आक्सीजन सांद्रण स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एक किग्रा. ह्यूमस, 44.2 किग्रा. हरी खाद के बराबर मूल्यवान होता है तथा जिस जमीन में केंचुए नहीं पाये जाते हों उसकी तुलना में केंचुओं से युक्त कृषि भूमि में ह्यूमिफिकेशन की दर 17.5 अधिक होती है।

जैवसंहति या 'बायोमास' उत्पादन एवं कुक्कुट व मत्सपालन के क्षेत्र में इसकी उपयोगिता को देखते हुए केंचुआ फार्म (वर्मीकल्चर) विकसित किये जा रहे हैं। वर्मी कंपोस्ट जैव खादों की श्रेणी में सर्वोत्तम माना गया है तथा इसका औद्योगिक उत्पादन पशुपालन के साथ-साथ आसानी से किया जा सकता है।

भारत में केंचुओं पर शोध के मुख्य केंद्र, भावलकर अर्थ वर्म रिसर्च इन्स्टीट्यूट (BERI) पूना व उत्तर प्रदेश में कुमाऊं विश्व विद्यालय की वर्मी कल्चर प्रयोगशाला है। विश्व में केंचुओं की करीब 6500 प्रजातियाँ पायी जाती हैं जिनमें से 45 प्रजातियाँ भारत में देखी गयी हैं। हिमालय क्षेत्र में केंचुओं की करीब 6 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। एक हेक्टेयर भूमि में यदि 100 वयस्क केंचुओं को प्रविष्ट करा दिया जाय तथा पानी का प्रतिशत 25-30 के लगभग हो तो केंचुए, 1-30 सेमी की ऊपरी परत में एक दिन में 25000 छिद्र बना देते हैं जो मृदा के ऑक्सीजन व जल के संचरण में काफी महत्वपूर्ण होते हैं। इनके द्वारा मृदा की ऊपरी सतह पर की गयी 'लीचिंग' अत्यंत उपयोगी होती है।

केंचुए कार्बनिक पदार्थों का सरलीकरण कर उनको आवश्यक पोषक तत्त्वों में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध

कराते हैं तथा ये मिट्टी के साथ-साथ वातावरण में मौजूद नाइट्रोजन ग्रहण करते हैं तथा इसे पौधों की जड़ों तक पहुंचाने का कार्य करते हैं जिससे कि पौधों को नाइट्रोजन आसानी से उपलब्ध हो जाता है । केंचुए की 'वर्मी कास्टिंग' में 30-40% यूरिया, 20-25% अमोनिया तथा 35-40% तक अन्य पोषक तत्त्व होते हैं । भूमि की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए उसमें माइक्रो बैक्टीरिया का होना अत्यधिक आवश्यक होता है तथा केंचुओं द्वारा छोड़ा गया मूत्र भूमि में पाये जाने वाले जीवाणुओं के लिए काफी अनुकूल वातावरण तैयार करता है । 25 वर्ग मीटर का 'केंचुआ फार्म' एक हेक्टेयर भूमि के लिए पर्याप्त वर्मी-कंपोस्ट उत्पादित कर सकता है । विश्व के कई विकसित देशों में सर्वाधिक 'केंचुआ फार्म' विकसित किये गये हैं और केंचुओं पर निरंतर शोध कार्य चल रहे हैं । यदि अवमल व बाहित अवमल का केंचुओं द्वारा पुनर्चक्रण कराया जाये तो ये फसलों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है ।

पिछले कुछ वर्षों में भारत में भी कार्बनिक खेती व परंपरागत खेती की बात को स्वीकारा जाने लगा है क्योंकि आजकल पर्यटन व्यवसाय में भी अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों द्वारा 'कार्बनिक फूड' की माँग की जाने लगी है तथा कार्बनिक कृषि उत्पादों की माँग निरंतर बढ़ती जा रही है ।

डॉ. सतपाल सिंह बिष्ट

विन्डसर कॉटेज, मल्लीताल, नैनीताल - 263 001

6. फसलोत्पादन में सूक्ष्म तत्त्वों का महत्त्व

इस शताब्दी के छठवें दशक में जब रासायनिक उर्वरकों और अधिक उपज देनेवाली फसलों के कारण देश में हरितक्रांति आयी, तो कुछ भागों से इस बात की खबर मिली कि गेहूँ की उपज मुख्य पोषक तत्त्व उपलब्ध करने के बाद भी नहीं बढ़ रही है, लगभग इसी समय देश के कुछ हिस्सों से इस बात की खबर मिली कि धान की फसल को कुछ रहस्यमय बीमारियों ने ग्रसित कर लिया है । अंत में इस रोग का कारण मिट्टी में कुछ अत्यंत सूक्ष्ममात्रिक तत्त्वों की कमी को पाया गया । प्रत्येक सूक्ष्ममात्रिक तत्त्व प्राणियों की एन्जाइम प्रणाली में विशिष्ट कार्य करता है । अभीष्ट मात्रा में ग्रहण न होने पर पौधे नाना प्रकार के रोगों के शिकार होने लगते हैं ।

अब तक ज्ञात कुल सात सूक्ष्ममात्रिक तत्त्व हैं -- लोहा, मैंगनीज, बोरॉन, जिंक, कॉपर, मोलिब्डिनम तथा क्लोरीन । ये सभी तत्त्व पौधों में एक निश्चित और विशेष कार्य की भूमिका अदा करते हैं । 70 क्विंटल धान गेहूँ प्रति हेक्टर की उपज प्राप्त करने हेतु पौधे मिट्टी से करीब 390 ग्राम जस्ता, 2700 ग्राम लोहा, 2600 ग्राम मैंगनीज, 150 ग्राम कॉपर (तांबा) 200 ग्राम बोरॉन और 14 ग्राम मॉलिब्डनम का अवशोषण मिट्टी से करते हैं ।

देश के विभिन्न राज्यों से मिट्टी के नमूने लिये गये और इन नमूनों की जांच के आधार पर जस्ते की कमी व्यापक रुप से देखने को मिली । करीब 50 प्रतिशत नमूनों में जस्ते की कमी पायी गयी । हरियाणा, कर्नाटक, पंजाब और तमिलनाडु में यह कमी अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक थी । कॉपर की कमी मुख्य रुप से केरल और तमिलनाडु में देखने को मिली । पंजाब में गेहूँ और मूंगफली में तांबे की कमी देखी गयी है । मैंगनीज की कमी कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु और हरियाणा में पायी गयी । बोरॉन की कमी बिहार और कर्नाटक और मोलिब्डिनम की कमी गुजरात और मध्य प्रदेश में पायी गयी है ।

फसलों में सूक्ष्म तत्त्वों का उपयोग या तो पर्णीय छिड़काव द्वारा या मिट्टी में इस्तेमाल करके किया जाता है । खड़ी फसल में कमी के लक्षण दिखायी देने पर पत्तियों पर पर्णीय छिड़काव किया जाना चाहिए ।

जस्ता कमी वाले क्षेत्रों में आमतौर पर जिंक सल्फेट, जिसमें 21 प्रतिशत जिंक होता है, 25 किलो जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर बुआई के समय उपयोग में लाना चाहिए । पंजाब में धान और गेहूँ के लिए 62.5 किलो जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर सिफारिश की गयी है । यदि धान में सिफारिश की गयी मात्रा उपयोग में लायी गयी है तो गेहूँ में जिंक सल्फेट डालने की जरुरत नहीं पड़ती । यदि सिफारिश की गयी मात्रा एक फसल में उपयोग कर ली जाती है, तो उसके बाद ली जानेवाली 4-5 फसलों

में जिंक सल्फेट डालने की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह भी सिफारिश की जाती है कि निर्धारित जिंक सल्फेट की मात्रा थोड़ी गीली मिट्टी में अच्छी प्रकार मिलाकर उपयोग में लानी चाहिए। खड़ी फसल में जिंक की कमी दिखाई देते ही पत्तियों पर पर्णीय छिड़काव की सिफारिश की जाती है इसके लिए एक किलो जिंक सल्फेट और 500 ग्राम बुझा हुआ चूना 200 लीटर पानी में मिलायें और इस घोल के 2-3 छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर करने से जिंक की कमी दूर हो जाती है। चूने के स्थान पर 4-6 किग्रा. यूरिया भी घोल में मिलायी जा सकती है।

लोहा कमी वाले क्षेत्रों में 10-30 किग्रा. आयरन सल्फेट (19 प्रतिशत लोहा) प्रति हैक्टर बुआई के समय उपयोग में लाना चाहिए। पत्तियों पर पर्णीय छिड़काव हेतु फसल पर 2-3 छिड़काव सप्ताह के अंतराल पर आयरन सल्फेट घोल से करें (इसके लिए 2.5 किग्रा. आयरन सल्फेट और सवा किग्रा. चूना 250 लीटर पानी में मिलायें)।

मैंगनीज कमी वाले क्षेत्रों में कमी की दशा के अनुसार 10-50 किग्रा. मैंगनीज सल्फेट (30-5 प्रतिशत मैंगनीज) प्रति हैक्टर बुआई के समय इस्तेमाल करें। खड़ी फसल में छिड़काव पत्तियों पर पर्णीय सप्ताह के अंतराल पर 0.5 प्रतिशत मैंगनीज सल्फेट घोल से करने चाहिए। इसके लिए 2.5 किग्रा. मैंगनीज सल्फेट सवा किग्रा. चूना 500 लीटर पानी में मिलायें।

तांबा कमी वाले क्षेत्रों में 10-50 किग्रा. कॉपर सल्फेट (24 प्रतिशत) प्रति हैक्टर बुआई के समय उपयोग में लायें। फसल में यदि तांबे की कमी दिखायी दे तो 2-3 छिड़काव सप्ताह के अंतराल पर 0.2 प्रतिशत कॉपर सल्फेट घोल से करें इसके लिए आधा किग्रा. कॉपर सल्फेट 250 लीटर पानी में मिलायें और उसमें 250 ग्राम चूना भी मिलायें।

बोरॉन की कमी को पूरा करने के लिए बोरेक्स जिसमें 10.5 प्रतिशत बोरॉन होता है, बुआई के समय 5.20 किग्रा. बोरेक्स प्रति हैक्टर इस्तेमाल करना चाहिए। पर्णीय छिड़काव हेतु 0.2 प्रतिशत बोरेक्स का घोल बनायें (इसके लिए 500 ग्राम बोरेक्स 250 लीटर पानी में मिलायें)। सूक्ष्मात्रिक पोषक तत्त्वों के लिए कोई सामान्य संस्तुति नहीं दी जा सकती है, क्योंकि कोई भी लगाता व्यापक क्षेत्र इनके अभाव से ग्रस्त नहीं पाया गया है। अतः बिना सावधानी व समुचित जानकारी के इनका प्रयोग हानिकारक भी हो सकता है।

डॉ. दिनेश मणि
विज्ञान परिषद प्रयाग, महर्षि दयानंद मार्ग,
इलाहाबाद - 211 002

प्रमात्रा (क्वांटम) सिद्धांत का रसायन शास्त्र में उपयोग

(पृष्ठ -30 का शेष भाग)

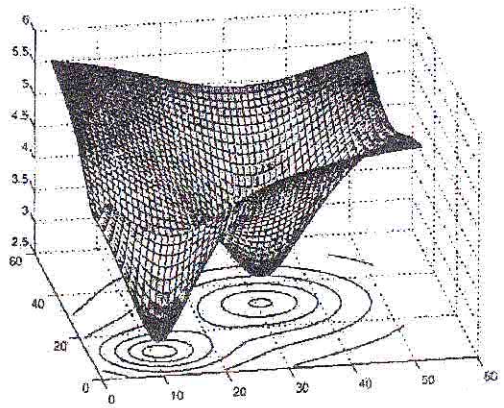

चित्र-1 : एक काल्पनिक रसायनिक क्रिया की ऊर्जा सतह

यह Ψ_i सहसंबद्ध ऑरबिटल की भूमिका निभाता है लेकिन N^7 की समस्या के बिना। इसलिए घनत्व फलन की उपयोगिता बढ़ती जा रही है। पोपल द्वारा घनत्व फलन का गॉसियन में समावेशन करने के बाद इसका उपयोग जटिल रासायनिक क्रियाओं को समझने के लिए और सरल हो गया। उदाहरण के तौर पर एक रासायनिक क्रिया का ऊर्जा सतह चित्र-1 में दर्शाया गया है। घनत्व फलन के मूल सिद्धांतों एवं समीकरणों के लिए वाल्टर कोहन नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

विज्ञान समाचार

भा. प. अ. केंद्र से :

1. अमोनियम डाइ-यूरेनेट केक के शोधन की नवीन विधि विकसित

इंडियन रेअर अर्थ्स लि. (IREL), ओड़िसा के ओड़िसा सैंड कांप्लेक्स (OSCOM) में थोरियम निष्कर्षण के दौरान अमोनियम डाइ-यूरेनेट टिक्की (केक) (ADUC) उपउत्पाद के रुप में प्राप्त होता है। इस केक में थोरियम और विरल मृदाओं की मात्रा ज्यादा होने की वजह से यह न्यूक्लीय कसौटी पर खरा नहीं उतरता है। इसका न्यूक्लीय ग्रेड तक शोधन करने के लिए आवश्यक नये प्रक्रम का प्रवाह-संचित्र (प्रोसेस फ्लोचार्ट) विकसित करने का कार्य यूरेनियम एक्सट्रेक्शन प्रभाग (UE D), पदार्थ प्रभाग (भा.प.अ.केंद्र) को सौंपा गया। यूरेनियम एक्सट्रेक्शन प्रभाग के गुणवत्ता नियंत्रण अनुभाग में प्रयोगशाला स्तर पर किये गये अध्ययनों से यह पता लगा कि ओड़िसा सैंड कांप्लेक्स में इस्तेमाल किये जा रहे विलायक निष्कर्षण प्रक्रम में कुछ मामूली से आपरिवर्तनों से ही केक की वांछित परिशुद्धि प्राप्त की जी सकती है। यू.ई.डी. के वैज्ञानिकों ने बाद में, OSCOM में इस प्रक्रम का सफल प्रदर्शन किया तथा थोरियम निष्कर्षण की उन्नत विधि का प्रशिक्षण भी दिया।

इस प्रदर्शन के आशाजनक परिणामों के आधार पर, भा. प. अ. केंद्र, इं.रे.अ.लि. के मध्य एक तकनीकी हस्तांतरण समझौता हुआ। इस आपरिवर्तित विधि की खास बात, अभी ओ. सें. कां. में चल रही विधि में, कोई भी बड़ा परिवर्तन किये बिना, इसको अपनाया जा सकता है। निकट भविष्य में ही अमोनिया डाइ-यूरेनेट केक के पूरे माल का शोधन संयंत्र-स्केल पर प्रारंभ हो जायेगा। यू.ई.डी., इं.रे.अ.लि. व भा.प.अ.केंद्र के वैज्ञानिक इस प्रक्रम को प्रारंभ और लागू करने में सहयोगी होंगे।

2. ठोस भंडारण निगरानी सुविधा (सोलिड स्टेट सर्वेलियेन्स फेसिलिटी) का प्रारंभ

26 जुलाई 1999 को डॉ. अनिल काकोड़कर, निदेशक, भा. प. अ. केंद्र ने ठोस भंडारण निगरानी सुविधा में निश्चित स्थल पर एक भंडारण इकाई, 'ओवरपैक' को रखकर, तारापुर में स्थित इस सुविधा का उद्घाटन किया। ओवरपैक में स्टेनलेस स्टील के दो कनस्तर होते हैं, प्रत्येक में 100 किग्रा. न्यूक्लीय अपशिष्ट को कांचीकृत (विट्रीफाइड) रुप में भरा होता है। ओवरपैक निकटवर्ती अपशिष्ट अचलीकरण संयंत्र (वेस्ट इंमोबिलाइजेशन प्लांट) में भरे जाते हैं। भंडारण इकाई को 17 टन वजनी पीपे में रखकर, (पीपा सीसे की धातु से परिरक्षित था) निम्न सतही ट्रेलर द्वारा लाया गया था। भंडारण इकाई को सही जगह पर रखने का कार्य, स्वदेश में ही आकल्पित व निर्मित, सुदूर संचालित पदार्थ हस्तन जुगतों व उपस्करों द्वारा किया गया।

अपने उद्घाटन भाषण में डॉ. काकोड़कर ने वेस्ट मेनेजमेंट डिवीजन के कर्मियों को एस.एस.एस.एफ. प्रारंभ करने हेतु प्रशंसा की। उन्होंने इसके आकल्पन, निर्माण व संचालन से जुड़े वैज्ञानिकों, इंजीनियरों के मिलकर कार्य करने की भावना का एक अच्छा उदाहरण बतलाया। इस घटना को परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में एक मील का पत्थर कहते हुए उन्होंने बतलाया कि संसार में बहुत कम ऐसे राष्ट्र हैं जिन्होंने इस तरह की भंडारण व्यवस्था की है। यह उच्च-स्तरीय न्यूक्लीय अपशिष्ट को गहरे भूमिगत भंडारों में संग्रह कर रखने से पहले की जानी वाली एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है।

इस सुविधा में भूमितल से एक द्रव चालित तहखाना है, जिसके अंदर दो तापीय तहखानों में लगभग 1700 ओवरपैकों के भंडारण की व्यवस्था है। अंतिम गहरे भूगर्भीय (गोदाम) संभारण स्थल तक ले जाये जाने से पूर्व ओवरपैकों को लगभग 20-30 सालों तक यहां रखने की व्यवस्था है। प्रत्येक ओवरपैक का अभिकल्पन 1.2 मिलीयन क्यूरी रेडियो सक्रियता को (जिसके रेडियो क्षय से 3 किवा. (kW) ऊष्मा निकलती है) रखने के लिए किया गया है। क्षय जनित ऊष्मा को 100 मी. ऊंची चिमनी द्वारा प्रेरित प्राकृतिक वायु संवहन से हटाया जाता है। यह एक स्वत: नियमित निकाय है जो ऊष्मा-भार में होने वाले परिवर्तनों को झेल सकता है।

प्रस्तुति : **डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला**
संपादक - 'वैज्ञानिक'

अन्य विज्ञान समाचार

1. गुणसूत्र-22 का रहस्य स्पष्ट हुआ !

वैज्ञानिकों के एक अंतर्राष्ट्रीय दल ने सर्वप्रथम एक पूर्ण गुणसूत्र के आनुवांशिक कूट के बारे में विवरणात्मक जानकारी प्राप्त कर लेने में सफलता प्राप्त की है । निश्चय ही, यह उपलब्धि सभी गुणसूत्रों के विषय में (जो मानव जीनोम का निर्माण करते हैं) किये गये कूट स्पष्टीकरण संबंधी प्रयासों के संदर्भ में मील का पत्थर सिद्ध होगी ।

"नेचर" नामक वैज्ञानिक पत्रिका के हाल में प्रकाशित अंक में इंग्लैंड, जापान और अमरीका के शोध वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि उन्होंने गुणसूत्र-22 (जो मानव गुणसूत्रों में द्वितीय लघुत्तम होता है ।) का कूट-स्पष्टीकरण (decoding) कार्य पूर्ण कर लिया है यद्यपि इसे मानव जीवन के विश्वकोश का प्रमुख अंश माना जाता है । मानव गुणसूत्रों के कूट-स्पष्टीकरण के बहुआयामी लाभ हैं, यथा-मानव शरीर की अधिकांश असाध्य व्याधियों (जैसे कैंसर, गठिया और हृदयरोग आदि) के बारे में भावी परिणामों, निदान तथा चिकित्सा विधाओं के संदर्भ में इनका उपयोग होता है ।

गुणसूत्र-22 में वे सभी जीन होते हैं जो प्रतिरक्षा की आधारशिला होते हैं तथा हृदय रोगों, शिजोफ्रेनिया, मानसिक अपंगता, अधिकांश प्रकार के कैंसरों तथा एक प्रकार के रक्त कैंसर (ल्यूकेमिया) में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । गुणसूत्र-22 के अनुक्रम विन्यास के ज्ञात होने से निश्चय ही उस कारक को गहराई से समझने में सहायता मिलेगी जो इन व्याधियों में दोषपूर्ण हो जाता है । व्याधि-उपचार के क्षेत्र में उचित औषधियों के विकास की दिशा में भी इससे आशातीत सफलता मिलने का मार्ग प्रशस्त होगा ।

वैज्ञानिकों ने कठिन परिश्रम के द्वारा गुणसूत्र - 22 के अंदर स्थित डी. एन. ए. के एक अणु में परस्पर जुड़े हुए 3 करोड़, 30 लाख रासायनिक निर्माण-खंडों के सही अनुक्रम को ज्ञात कर लिया है । गुणसूत्र - 22 में A, T, C और G अक्षरों का प्रयोग करते हुए (जो क्रमश: एडेनीन, थायमीन, साइटोसीन और गुआनीन के द्योतक हैं) इन यौगिकों के सही अनुक्रम का मुद्रण एक अतिशय विस्तीर्ण दूरभाष पुस्तिका को पूर्ण रुप से भरने में सक्षम सिद्ध होगा ।

वैज्ञानिकों ने यह भी स्पष्ट कर दिखाया है कि इस नवीनतम सूचना-ग्रंथ में 23 जोड़े गुणसूत्रों में से केवल एक युग्म के विवरण ही सूचीकृत रहते हैं (जो प्रत्येक मानव कोशिका के केंद्रक में अवस्थित होते हैं) । यह उपलब्धि तो मात्र एक प्रारंभिक प्रयास है जो एक दशक पर्यंत के शोधकार्य का एक आवश्यक चरण माना जाता है । इस प्रस्तावित शोध कार्य को अमरीका प्रशासन, ब्रिटेन के वेलकम ट्रस्ट तथा अन्य देशों की सरकारों द्वारा आर्थिक सहयोग प्रदान किया जा रहा है परंतु अब भी इस उपलब्धि के चतुर्दिक एक प्रकार का भय व्याप्त है । राष्ट्रीय मानव जीनोम शोध संस्थान के निदेशक डॉ. फ्रांसिस कोलिन्स के अनुसार "सर्वप्रथम एक मानव गुणसूत्र का संपूर्ण विन्यास देख पाना घने कोहरे से एक विशाल समुद्री जलपोत को बाहर निकालने के समान होता है ।"

बधाईपूर्ण वातावरण होने के बावजूद शोधकर्ताओं को यह भली-भाँति ज्ञात है कि उनकी प्रतियोगिता निजी कंपनियों के साथ है । एक अन्य वैज्ञानिक की टिप्पणी के अनुसार "यदि मानव जीनोम एक व्यापारिक संपत्ति के रुप में देखा जाता है तो यह विज्ञान और मानवता के प्रति एक भयानक आघात होगा ।" इस स्थिति को बचाने के लिए वैज्ञानिकों के अंतर्राष्ट्रीय संगठन ने इंटरनेट पर अपने कार्य को नि:शुल्क उपलब्ध कराने की सहमति दे दी है । डी. एन. ए. के प्रत्येक लघुत्तम भाग का विन्यास ज्ञात कर लेने के 24 घंटे के भीतर इसे इंटरनेट पर उपलब्ध कराया जायेगा ।

वैज्ञानिकों ने ऐसी आधुनिक पद्धतियों की सीमाओं की खोज भी कर ली है जिनका विकास विगत 15 वर्षों के अंतराल में आनुवांशिकी कूट के स्पष्टीकरण के बारे में किया गया है । शोधकर्ताओं ने गुणसूत्र में 11 रिक्त स्थानों के बारे में सूचित किया है जिनको अत्याधुनिक उपलब्ध तकनीकों के बावजूद पढ़ा नहीं जा सका है । इन

अपेक्षाकृत लघु अंतरालों में बड़ी संख्या में पुनरावृत्तीय अनुक्रम होते हैं। गुणसूत्रों के इन खंडों में से कुछ की उपादेयता के बारे में स्पष्ट जानकारी अभी तक अज्ञात है। तथापि सामान्यतया यह माना जाने लगा है कि अनुक्रम इन खंडों के बिना भी पूर्ण है।

कोलिन्स ने लिखा है कि शोधकर्ता समय के पूर्व ही यह ज्ञात कर लेते हैं कि इस प्रकार के अंतराल अवश्य होंगे और इस संदर्भ में एक मानक भी खोज निकाला है जो किसी गुणसूत्र की प्रयोगात्मक पूर्णता स्पष्ट करता है। ऐसा अनुमान है कि ऐसे कई समूहों का होना संभावित होता है। जीनोम संस्थान के निदेशक ने यह सूचित किया है कि इनमें से मात्र 11 ही पुनराश्वासित होते हैं। संभवतः भावी दस वर्षों में गुणसूत्र-22 के कम से कम तीन प्रतिशत रिक्त अंतरालों को भरने की प्रणाली की सफल खोज कर ली जायेगी।

प्रस्तुति : **अखिलेश्वर कुमार तिवारी**
ए-1, भारतीय लाख अनुसंधान संस्थान,
नामकुम - रांची - 263 010

2. भारतीय एक्सरे टेलीस्कोप

यह बात किसी से छुपी नहीं है कि 'इसरो' यानी भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ने अभी तक कई मानवोपयोगी उपग्रहों को अंतरिक्ष में भेज कर भारतीय जनमानस की बड़ी सेवा की है और उसके जीवन स्तर तथा जानकारी में गुणात्मक बदलाव लाया है। अपनी योजनाओं को आगे बढ़ाते हुए इस संगठन ने 2004 तक एक एक्सरे टेलीस्कोप को भारत में ही बनाकर अंतरिक्ष में भेजने का अभी हाल में एलान किया है। यह उल्लेखनीय है कि इसरो ने अभी तक कई दूर-संसूचन तथा संचार उपग्रहों को स्वदेशी तौर पर निर्मित किया है और अब बैंगलोर में एक ऐसे नये उपग्रह को बनाने का कार्य कर रहा है जिसमें रखे जाने वाले एक्सरे संसूचक को मुंबई स्थित टी. आई. एफ. आर. में बनाया जायेगा। यह संसूचक 2 से 80 किलो इलेक्ट्रॉन वोल्ट (keV) की एक्स किरणों का पता चलायेगा। जी हां, एक्स किरणों के संसूचन का प्रावधान अन्य टेलीस्कोपों में नहीं है। यह जानकारी इस संस्थान के एक्सरे खगोलशास्त्री डॉ. रवि मनचंदा ने दी है। इसके साथ इस उपग्रह में पराबैगनी (अल्ट्रावॉयलेट) विकिरणों के संसूचन हेतु भी कुछ उपकरण रखने की योजना है जिनका अभिकल्पन तथा निर्माण कार्य भारतीय खगोल भौतिकी संस्थान, बैंगलोर में किया जा रहा है।

3. मलेरिया के लिए एक और नयी औषधि

कुछ समय पहले तक यह लगने लगा था कि मलेरिया इस धरती से लगभग समाप्त हो गया है। परंतु हाल में इसका प्रकोप न केवल भारत में बल्कि योरोप में भी नये रूप में पनप रहा है। जी हां, यह नया रूप कई जान भी ले चुका है। अतः वैज्ञानिक फिर से सक्रिय हो गये हैं। 'न्यू साइंटिस्ट' पत्रिका में प्रकाशित एक ताजी जानकारी के आधार पर जर्मनी में मलेरिया पर शोध करने वालों को विश्वास हो गया है कि उन्होंने इस बीमारी के लिए फिर से एक नयी औषधि तैयार कर ली है। उनका यह विश्वास चूहों पर किये गये प्रयोगों से मिली सफलता पर आधारित है। जीसेन-जर्मनी में जस्टट्यूस लीबिग विश्वविद्यालय के डॉ. हासन जोमा तथा उसके साथियों ने प्लास्मोडियम फॉल्सीपारम नामक मलेरिगा परजीवी के ज़ीनोम का अध्ययन किया है और पाया कि फॉस्मिडा-माइसीन नामक एन्टीबैक्टीरियल ड्रग परजीवियों में मुख्य एन्जाइम को अवरुद्ध कर सकती है। मलेरिया से ग्रसित चुहियों को जब यह ड्रग दी गयी तो वे आठ दिनों में पूर्णतः स्वस्थ हो गये। चूंकि स्तनधारियों में ऐसे एन्जाइम नहीं होते जो फॉस्मिजोमाइसिन से लक्षित हैं अतः इन औषधियों का मानवों पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस आधार पर अब इन ड्रगों को मानव प्राणियों पर परीक्षण की स्थिति बन गयी है। और इसके अच्छे परिणाम मिलेंगे ऐसी आशा है।

4. 21 वीं सदी के पुल

क्या आपने कभी सोचा है कि आने वाली शताब्दी में पुलों का निर्माण कैसा होगा ? जी हां, भारतीय इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियर्स द्वारा निकाली जाने वाली, 'टैकनोरैमा' नामक पत्रिका में हाल में प्रकाशित जानकारी से पता चला है कि पुलों के निर्माण पर एक अमरीकी विश्वविद्यालय में महत्त्वपूर्ण अनुसंधान कार्य हुआ है। इसके अंतर्गत वैज्ञानिक फाइबर रिइन्फोर्स्ड पदार्थों के

उपयोग की बात सोच रहे हैं क्योंकि यह कांक्रीट तथा स्टील के मुकाबले हलके, मजबूत तथा अधिक टिकाऊ पाये गये हैं। इन्हें कांच तथा ग्रेफाइट के फाइबर को पॉलीमर मेट्रिक्स में मिलाकर बनाया जा सकता है ताकि इनकी मदद से शोधकर्ता यह जान पायेंगे कि यातायात के दौरान ये पदार्थ किस तरह का व्यवहार करेंगे। संसूचकों को विश्वविद्यालय के फाइबर-ऑप्टिक कंप्यूटर नेटवर्क से जोड़ा जा रहा है जिससे संरचना से संबंधित सभी आंकड़े एक जगह मिल सकें। है न कुछ नयी बात!

5. 'चंद्र मिशन' द्वारा कुछ नये प्रयोग

यह हमारे लिए निसंदेह एक फ़क्र की बात है कि 1983 में भौतिकी में नोबेल पुरस्कार विजेता, भारतीय स्कूल के खगोल भौतिकविद् प्रोफेसर सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर के मान में अमरीका की प्रमुख अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' ने अपनी एक स्वतंत्र वेधशाला का नाम 'चंद्रा एक्सरे आवजरवेटरी' यानी वेधशाला रखा है। इस प्रयोगशाला की कोलंबिया अंतरिक्ष शटल कार्यक्रम के आधीन हाल के अंतरिक्ष मिशन में एक अद्वितीय भूमिका बतायी गयी है। यह वह पहली शटल उड़ान है जिसका संचालन एक महिला कर रही हैं तथा इसका प्रदाय भार भी सबसे अधिक है। इसके द्वारा चंद्रा वेधशाला ब्रह्मांड में शोध के लिए एक नयी खिड़की खोलेगी क्योंकि इस उड़ान में 10 से 100 गुना अधिक तक के शक्तिशाली एक्सरे टेलीस्कोपों को रखा गया है। प्रदाय भार विकास के अध्यक्ष कैनेथ लेडवेटर का कहना है कि इसकी अद्वितीय क्षमताओं के द्वारा, जहां तक एक्सरे विजन का प्रश्न है, हम एक सुपरमैन में भी ईर्षा पैदा कर सकते हैं।

इन वैज्ञानिक अनुसंधानों का उद्देश्य ब्लैक होल के समीप के एक्सरे क्षेत्र का अध्ययन, गामाकिरण बर्स्टर का आफ्टरग्लो, इन्फैंट यानी नवजात क्वाजर पर अध्ययन इत्यादि हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चंद्रा, दस हजार और एक लाख चालीस हजार किलोमीटर के बीच के विकेंद्रीकृत आरबिट में उड़ेगा।

संकलन : **डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल**
तकनीकी भौतिकी एवं प्रारूप इंजीनियरी प्रभाग,
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

विज्ञान कविता

अभिनंदन के फूल

विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

सौदामिनी को तारों में उतार लिया है,
अभियंत्रणा का सुंदर सा उपहार दिया है।
सारी सावधानी पर विचारा है तुमने,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !
विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

कर्मठता की भावना मन-मंदिर में बसी,
ज्योति रश्मि से उतरती है नित उर्वशी।
गीता के हर ज्ञान को निखारा है तुमने,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !
विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

धरती जब भी सूखे से अभागिन बनी है,
पंपिंग सेट के पानी से सुहागिन बनी है।
तारों की बारात को उतारा है तुमने,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !
विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

व्यर्थ न तुम्हारी कभी अर्चना गयी,
साधना तेरी, जहाँ न कल्पना गयी।
विद्युत गृह में रात भर गुजारा है तुमने,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !
विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

सब भूलें फिर भी प्रगति कहानी रहेगी,
कण-कण पर लिखी तेरी कुर्बानी रहेगी।
बाधाओं में भी मंजिल निहारी है तुमने,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !
विद्युत शक्ति धरती पर उतारने वालों,
कितना अपने देश को संवारा है तुमने !

श्रीमती आशा सिंह
531, मीरापुर, नेहरूनगर, इलाहाबाद

संगोष्ठी समाचार

1. बीसवीं सदी में भौतिकी तथा इक्कीसवीं सदी के लिए उभरती दिशाएं (IPAS-99)

नवंबर 10-12, 1999 के दौरान भारतीय भौतिकी संस्था (IPA) ने टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान (TIFR), मुंबई में उपर्युक्त विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया। इसका उद्देश्य, एक ओर बीसवीं सदी में भौतिकी में हुए महत्वपूर्ण, प्रेरणात्मक विकासों की समीक्षा करना तथा इन सबका समाज के उत्थान में योगदान / प्रभाव पर विचार करना था, वहीं दूसरी ओर वर्तमान में उपलब्ध विश्व प्रवाह (ग्लोबल ट्रेन्ड) की नींव को देखते हुए, नयी शताब्दी में भौतिकी की विकास दिशा के बारे में कुछ आकलन करना था। इस संगोष्ठी में सारे देश से आये वरिष्ठ वैज्ञानिकों, युवा वैज्ञानिकों, अध्यापकों तथा छात्रों को मिलाकर लगभग 600 लोगों ने भाग लिया। इस संगोष्ठी में उद्घाटन सत्र के अलावा 9 तकनीकी सत्र एवं "भौतिकी और समाज" विषय पर एक परिचर्चा का आयोजन किया गया।

संगोष्ठी का उद्घाटन परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष तथा आई. पी. ए. के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ. राजगोपाल चिदंबरम् ने किया। उन्होंने भौतिकी तथा विज्ञान की अन्य शाखाओं, विशेषकर जीवविज्ञान में काफी सक्रिय इन्टरफेसिंग की संभावना बतायी। साथ ही उन्होंने आज के वैज्ञानिक परिदृश्य को देखते हुए विलक्षण बुद्धि के छात्र-छात्राओं को भौतिकी जैसे विषयों के उच्चस्तरीय अध्ययन के लिए आकर्षित करने के लिए, एक सही वातावरण बनाने पर विशेष जोर दिया।

आई. पी. ए. के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. श्याम सुंदर कपूर ने बीसवीं सदी की भौतिकी की एक क्रमबद्ध झलक प्रस्तुत की और बताया कि क्वांटम तथा सापेक्ष वाद के सिद्धांतों ने पदार्थ, ऊर्जा, आकाश तथा समय से संबंधित हमारी समझ में किस प्रकार प्रतिमान (Paradigm) परिवर्तन लाये। अर्धचालक भौतिकी एवं तकनीकी पर आधारित सूचना प्रौद्योगिकी (इंफार्मेशन टेक्नोलॉजी) ने किस प्रकार आज हमारे सामाजिक सोच एवं जीवन को प्रभावित किया है, इस बात का उल्लेख डॉ. कपूर ने बड़ी सहजता से किया।

भविष्य में भौतिकी का स्वरूप क्या होगा ? इसका पूरा-पूरा अनुमान लगाने के बारे में टी. आई. एफ. आर. के निदेशक डॉ. सुधांशु झा ने कुछ संदेह व्यक्त किये क्योंकि भौतिकी का दृश्य काफी तेज गति से बदलता जा रहा है। उनके विचार में इस संगोष्ठी में होने वाले विचार विमर्श का 'लेखा जोखा' आने वाली शताब्दी के लिए एक तरह से आधारभूत दस्तावेज़ (डाक्यूमेंट) का कार्य करेगा। आई. पी. ए. के सचिव डॉ. एस. ए. अहमद ने उम्मीद जतायी कि यह संगोष्ठी युवा वैज्ञानिकों तथा छात्रों को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धी भौतिकी के स्तर का ज्ञान अर्जित करने और उसे आधुनिक (up date) बनाने में सहायक होगी। संगोष्ठी के संयोजक डॉ. भट्ट ने सभी संबंधित महानुभावों का धन्यवाद ज्ञापन का महत्वपूर्ण कार्य किया। संगोष्ठी के दौरान, तकनीकी सत्रों में 15 आमंत्रित वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं जिनमें क्वांटम यांत्रिकी, सापेक्षतावाद का सिद्धांत, कॉस्मोलॉजी, खगोल विज्ञान, खगोल भौतिकी, नाभिकीय भौतिकी, परमाण्विक, आण्विक विज्ञान तथा नये पदार्थों एवं पदार्थ विज्ञान शोध से संबंधित विषयों को खासतौर पर शामिल किया गया था। इनके साथ 9 अन्य वार्ताएं भी प्रस्तुत की गयीं जो प्रगत तकनीकी क्षेत्र जैसे लेसर, अंतरिक्ष, चिकित्सा प्रतिबिंबन, त्वरक, नाभिकीय विखंडन एवं संलयन ऊर्जा से संबंधित थी।

इन वार्ताओं और परिचर्चा के दौरान 21 वीं सदी के लिए उभरती विभिन्न दिशाओं की ओर संकेत किया गया। इनमें से कुछ प्रमुख क्षेत्र / विषय इस प्रकार हैं : नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र में रेडियो सक्रिय आयन पुंज के उपयोग से नाभिकीय बलों एवं स्थायित्व से संबंधित कई मूलभूत शोध, क्वार्क तथा क्वांटम क्रोमोडायनेमिक्स के परिप्रेक्ष्य में मेसॉन एवं कुछ विचित्र हेड्रोन युक्त नाभिक एवं उनकी भौतिकी, न्यूट्रॉन पुंज का फेरोइलेक्ट्रिक पतली फिल्में तथा लिथियम-आयन बैटरी में उपयोग इत्यादि का महत्त्व रहेगा। इसके साथ गुरुत्व क्वांटाइजेशन, क्वार्क परिसीमन समस्या, महा एकीकरण (ग्रेंड यूनिफिकेशन), सुपर सममिति (सिमेट्री), नॉन-जीरो न्यूट्रिनो पदार्थ भी अगली सदी के लिए

उत्तेजनात्मक विषय रहेंगे ।

उच्च कोटि के उपकरण एवं तकनीकी की उपलब्धता के आधार पर कॉस्मोलॉजी में चल रहे पयोगों और सैद्धांतिक शोधों से ब्रह्मांड के नये स्वरूप होने के संकेत हैं । संघनित पदार्थ भौतिकी के लिए नैनो प्रावस्था एवं नैनो कण संबंधित भौतिकी तथा युक्तियों का विकास, चुंबकीय बहु परतीय फिल्में, उच्च ताप चालकता की भौतिकी एवं तकनीकी, अर्धचालक संसूचकों के विकास में MEMS तकनीक की भूमिका, सिन्क्रोट्रॉन विकिरण द्वारा माइक्रोलीथोग्राफी, इत्यादि को विशेष बल मिलेगा । प्रदूषण विहीन ऊर्जा के लिए हाइड्रोजन का उपयोग, थोरियम आधारित परमाणु रिएक्टर, क्वांटम कंप्यूटर, क्वांटम कूट लेखन (Cryptography), अतितीव्र कंप्यूटर इत्यादि प्रौद्योगिकी के नये आयाम सिद्ध होंगे । चिकित्सा के क्षेत्र में दो प्रतिबिंबों (जैसे CT एवं MRI) के सह-अभिलेखन की आवश्यकता रहेगी क्योंकि इससे अंग विशेष की संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक (Functional) सूचना मिलेगी, अंतरिक्ष कार्यक्रमों में उपग्रहों के उपयोग का झुकाव ग्रामीण क्षेत्रों की ओर बढ़ेगा ।

इस तरह की संगोष्ठी का आयोजन अपने आप में एक सकारात्मक सोच एवं दूरदृष्टि का प्रमाण है ।

प्रस्तुति : **डॉ. चमनलाल भट्ट**
(संगोष्ठी-संयोजक)
अध्यक्ष, नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला,
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

2. नोबेल पुरस्कार : किसे और किस लिए ?

वर्ष 1999 के नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों एवं उनके कार्यों के बारे में कुछ जानकारी देने के उद्देश्य से हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद ने 23 मार्च 2000 को एक अर्ध दिवसीय सेमिनार का आयोजन किया । इसके अंतर्गत भौतिकी, रसायनिकी और फिजियोलॉजी एवं मेडिसिन के वर्ष 1999 के नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों के कार्यों पर निम्नलिखित वक्ताओं द्वारा प्रकाश डाला गया । वार्ताएं हिंदी में प्रस्तुत की गयीं :

1. ***भौतिकी*** : 'कण भौतिकी में क्षीण विद्युत बलों के सिद्धांत की महत्ता', डॉ. वी. जेराडस्ट हूप्ट (डच) तथा डॉ. मार्टिनस वेल्टमैन (डच), **वार्ताकार : डॉ. अविनाश धर, टी.आई.एफ.आर., मुंबई ।**
2. ***रसायनिकी*** : 'अतितीव्र (फेम्टोसेकंड) स्पेक्ट्रोस्कोपी के लिए तकनीक का विकास,' डॉ. अहमद जेवैल (अमरीकी), **वार्ताकार : डॉ. अविनाश सप्रे, भा. प. अ. केंद्र, मुंबई ।**
3. ***फिजियोलॉजी एवं मेडिसिन*** : 'प्रोटीन मार्गदर्शन की क्रियाविधि', डॉ. गुन्टर ब्लोबेल (अमरीकी), **वार्ताकार : श्री रवि डी. माकड़े, भा. प. अ. केंद्र, मुंबई ।**

इस अवसर पर समारोह अध्यक्ष डॉ. एस. के. सिक्का, निदेशक, ठोस अवस्था भौतिकी तथा स्पेक्ट्रोस्कोपी वर्ग, भा. प. अ. केंद्र ने वार्ताकारों के सुंदर प्रयास को सराहा तथा 'परिषद' को इस श्रृंखला को बनाये रखने के लिए बधाई दी । डॉ. सिक्का ने युवा वैज्ञानिकों के लिए एक अच्छी बात यह कही कि उन्हें अपने कार्य को ईमानदारी से इस उम्मीद के साथ लगातार आगे बढ़ाते रहना चाहिए कि उनके कार्य का सही मूल्यांकन कई वर्षों बाद भी हो सकता है । ऐसा ही कुछ नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों के साथ होता है क्योंकि किसी भौतिक सिद्धांत की खोज एवं अभिनव परिकल्पना की पुष्टि में वर्षों भी लग जाते हैं । उन्होंने यह स्पष्ट किया कि ज्ञान के विकास के लिए हमें सभी भाषाओं का आदर करना चाहिए । संयोजक डॉ. कोठियाल ने सभी वक्ताओं एवं श्रोताओं का स्वागत किया तथा उन्हें इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए धन्यवाद भी दिया ।

प्रस्तुति : **डॉ. गो. प्र. कोठियाल,** संयोजक,
तकनीकी भौतिकी एवं प्रारूप इंजी. प्रभाग
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

वैज्ञानिक परिचय

सर सी. वी. रामन

सदी के इन आख़िरी महीनों में भारत भी इस सदी के अपने महान वैज्ञानिकों की पहचान में लगा है। जिन वैज्ञानिकों का नाम सबसे ऊपर है, उनमें नंबर एक वैज्ञानिक नज़र आ रहे हैं सर सी. वी. रामन। संयोग से इसी वर्ष उनका एक सौ ग्यारहवाँ जन्मदिन भी है। अतः इस सुअवसर पर भारत को विज्ञान के पहले-पहले नोबेल पुरस्कार से गौरव दिलाने वाले इस विलक्षण वैज्ञानिक की याद आ जाना स्वाभाविक ही है।

रामन का जन्म 7 नवंबर 1888 के दिन तामिलनाडु के त्रिचनापल्ली नगर में हुआ। पढ़ने-लिखने में अत्यंत मेधावी रामन ने 1904 में स्वर्णपदक पाकर मद्रास के प्रेसीडेंसी कॉलेज से स्नातक की परीक्षा पास की। एम. ए. डिग्री के अध्ययन के दौरान रामन ने विज्ञान के प्रयोग और अनुसंधान पत्रिकाओं में इनका ब्यौरा छापना भी शुरूकर दिया था। रामन का जीवन कर्मयोगी की तरह विज्ञान के रहस्यों को खोजने में लगा रहा। हीरों की रचना, आँख की रचना, सागर जल के बदलते रंग तथा संगीत के सुरीले वाद्य-यंत्रों ने उन्हें विशेष तौर पर अपनी ओर खींचा। उनके द्वारा किये गये अणुओं का प्रकाश के छितराव यानी 'मॉलीक्यूलर स्कैटरिंग ऑफ़ लाइट' संबंधी अनुसंधानों ने उन्हें विश्वख्याति और 1930 में भौतिकशास्त्र का नोबेल पुरस्कार दिलवाया। विज्ञान जगत आज इस शोध को रामन-प्रभाव के नाम से जानता है। ऐसा कहा जाता है कि इस शोध का उपकरण रामन ने सिर्फ 200 रुपये में बनाया था। इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस से रिटायर होकर रामन ने 1949 में एक उत्कृष्ट संस्था की स्थापना की जिसे रामन रिसर्च इंस्टिट्यूट कहा गया। इसे इस वर्ष 50 वर्ष हो गये हैं। 1929 में ब्रिटेन ने उन्हें 'नाइट' की उपाधि दी और वे 'सर सी. वी.' कहलाने लगे। भारत सरकार ने उनकी सेवाओं, अद्वितीय देशप्रेम और ज्ञान-विज्ञान की सुगंध फैलाने के महिती कार्य के कारण उन्हें 1954 में भारत रत्न की उपाधि से अलंकृत किया। 1971 में उनकी पहली पुण्यतिथि पर भारत ने उन्हें एक अनोखा डाक-टिकट निकालकर भी सम्मानित किया जिसमें रामन की तस्वीर और एक जगमगाता हीरा दिखाया गया है। रामन अपनी वैज्ञानिक उत्कृष्टता से इस सदी की उच्चतम भारतीय मिसाल बन गये।

डॉ. देवकी नंदन
ए-304 हृषीकेश, स्वामी समर्थ नगर,
अंधेरी (प.), मुंबई-400 053

विज्ञान कविता

उपकारी रोबो

रोबो तुम कितने उपकारी
करते सदा काम तुम भारी
चटपट करते सारा काम
खूब कमाया तुमने नाम
रात दिवस का अथक परिश्रम
कभी न थकते कभी न रुकते
जहरीली गैसों में रहते
ऊंचे ताप, ठंड तुम सहते
खतरों में जहाँ मानव अटके
तुम हो आते सभी स्थान
सिगरेट, चाय, आराम न जाना
प्रकाश, अंधेरे का फर्क न माना
थोड़ी बिजली लेकर जाते
आने-जाने में वक्त न गंवाते
मानव के तुम आज्ञाकारी
आज्ञा पाकर क्षण न रुकते
काम टनाटन सारे करते
वंदन के तुम हो पात्र
रोबो तुम कितने उपकारी।

वंदना त्रिपाठी 'जहां'
136-अशोक नगर, बशारतपुर,
गोरखपुर - 273 004 (उत्तर प्रदेश)

हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे, मुंबई - 400 085

वार्षिक प्रतिवेदन - 1998-99

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद कि कार्यकारिणी समिति की ओर से 1998-99 की गतिविधियों का ब्यौरा आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

1. 'वैज्ञानिक' का प्रकाशन

परिषद की प्रमुख गतिविधियों में त्रैमासिक पत्रिका 'वैज्ञानिक' का प्रकाशन पूर्ववत हुआ। इस वर्ष हालांकि प्रकाशन में कुछ विलंब रहा फिर भी चारों अंकों का प्रकाशन पूर्ण किया गया। पिछले वर्ष की भांति इस वर्ष 1999 के पहले दोनों अंकों (जनवरी-मार्च तथा अप्रैल-जून) को संयुक्त रूप से प्रतियोगिता विशेषांक 31(1/2) के तौर पर प्रकाशित कर विलंब को कुछ कम करने का प्रयत्न किया गया। सभी अंकों में लेख, टिप्पणियां, बालविज्ञान के साथ साथ विज्ञान कविताएं, वैज्ञानिक परिचय, पाठकों की प्रतिक्रियाएं इत्यादि प्रकाशित की गयीं। नोबेल पुरस्कार संबंधित लेखों का विशेष समावेश किया गया। संपादकीय के माध्यम से आर्थिक प्रतिबंधों के परिप्रेक्ष्य में स्वदेशी तकनीक, मिलेनियम बग तथा क्वांटम कंप्यूटर - 21 वीं शताब्दी की चुनौती जैसे विषयों पर प्रकाश डाला गया। इस वर्ष अभियान पत्रिका से लोक रुचि के कुछ लेखों का समावेश किया गया। भविष्य में उनका प्रकाशन पाठकों की प्रतिक्रिया पर निर्भर करेगा। 'वैज्ञानिक' के प्रकाशन की समग्रता को देखते हुए परिषद विशेष रुप से डॉ. एम. आर. बालकृष्णन. अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं प्रभाग, 'वैज्ञानिक' के प्रमुख संपादक डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल एवं संपादक मंडल के उनके सहयोगी श्री हरिओम मित्तल, डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला, डॉ. राज नारायण पांडेय, डॉ. भूपेंद्र सिंह तोमर और व्यवस्थापक मंडल के संयोजक श्री गोरा चक्रवर्ती एवं उनके सहयोगी डॉ. अशोक कुमार सूरी, डॉ. सतीश कुमार गुप्ता, श्री कुलवंत सिंह तथा श्री राजेश कुमार के आभारी हैं। 'वैज्ञानिक' की सुसज्जा में डॉ. माधव सक्सेना की संपादक मंडल के साथ विशेष भूमिका रही, अत: परिषद उनकी भी आभारी है।

2. डॉ. होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता

इस वर्ष इस प्रतियोगिता हेतु कुल 24 लेख प्राप्त हुए। प्रथम पुरस्कार रु. 2000, डॉ. कपूर मल जैन को 'क्वांटम इलेक्ट्रानिकी से जन्मी एक और क्रांति' पर दिया गया तथा द्वितीय पुरस्कार रु. 1500, कु. पूजा तिवारी को 'कोशिका-चिकित्सा विज्ञान के नवीन आयाम' पर दिया गया। इस प्रतियोगिता में कुल दस लेखों को पुरस्कृत किया गया एवं रु. 6750/- की राशि पुरस्कार स्वरुप वितरित की गयी। लेख प्रतियोगिता के संयोजक श्री इंद्रकुमार शर्मा के प्रति परिषद अपना आभार प्रकट करती है।

3. वैज्ञानिक प्रश्नमंच

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरु के जन्मदिन के उपलक्ष्य में दस वर्ष पूर्व परिषद ने बच्चों के लिए वैज्ञानिक प्रश्नमंच का आयोजन आरंभ किया था। इसी कड़ी में दसवां प्रश्नमंच का आयोजन 24 फरवरी, 1999 को हुआ जिसमें अणुशक्तिनगर स्थित केंद्रीय विद्यालयों के बच्चों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। आयोजन में केंद्रीय विद्यालयों के प्राध्यापकों एवं अध्यापकों को आमंत्रित किया गया था। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता, परिषद अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद ने की। डॉ. किरण दोषी, अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा शिक्षण संस्था (AEES) समारोह के मुख्य अतिथि थे। मुख्य अतिथि ने बच्चों को अच्छे प्रदर्शन के लिए बधाई दी एवं विजेताओं को पुरस्कार दिये। इस समारोह के सफल आयोजन के लिए परिषद डॉ विजय कुमार मनचंदा एवं उनके सहयोगियों के प्रति आभारी है।

4. नोबेल पुरस्कार : किसे और क्यों - एक संगोष्ठी

विज्ञान के क्षेत्र में दिये जाने वाले श्रेष्ठतम पुरस्कार (नोबेल पुरस्कार) विजेता वैज्ञानिक तथा उनके कार्यों के बारे में जानकारी देने के उद्देश्य से हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद पिछले कुछ वर्षों से एक अर्धदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन करती आ रही है। इस वर्ष 1998 के भौतिकी, रासायनिकी एवं चिकित्सा विज्ञान के नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों के कार्यों पर प्रकाश डालने हेतु 9 मार्च 1999 को इस श्रृंखला की आठवी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस समारोह के मुख्य अतिथि श्री अनिल कुमार आनंद, निदेशक, रिएक्टर परियोजना वर्ग एवं तकनीकी समन्वय तथा अंतर्राष्ट्रीय वर्ग ने इसे विज्ञान के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण जानकारी देने वाला कार्यक्रम बताया। इस वर्ष के भौतिकी में नोबेल पुरस्कार प्रो. रॉबर्ट लाफलिन, प्रो. डेनियल त्सुई एवं प्रो. होर्स्ट एल स्टोरमर को आंशिक (फ्रेक्शनल) क्वांटम हॉल प्रभाव पर दिया गया। रासायनिकी के क्षेत्र में अणुओं तथा उनसे संबंधित रसायनिकी प्रक्रियाओं के गुणों के अध्ययन हेतु सैद्धांतिक क्वांटम रासायनिकी विधियों का विकास पर प्रो. वाल्टर कोहन एवं प्रो. जॉन ए. पोपल को दिया गया। चिकित्सा विज्ञान में नाइट्रिक ऑक्साइड का कार्डियोवेस्कुलर प्रणाली पर प्रभाव पर प्रो. रॉबर्ट फर्चगोट, प्रो. लुइस इग्नेरो, प्रो. फेरिड मुराद को दिया गया। परिषद प्रो. नंदिनी त्रिवेदी, प्रो. मनोज मिश्रा, डॉ. कृष्णा बी. सैनीस, एवं कार्यक्रम के संयोजक डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल की आभारी है।

5. वैज्ञानिक संगोष्ठियां एवं कार्यशालाएं

5.1 किशोरावस्था की समस्याएं

मानव स्वास्थ्य संगोष्ठी श्रृंखला के अंतर्गत परमाणु ऊर्जा आयोग के कर्मचारी एवं उनके परिवारों के लाभ के लिए 11 जून 1998 को मल्टीपरपज सभागृह, ट्रेनिंग स्कूल हॉस्टेल, अणुशक्तिनगर में उपरोक्त विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री अनिल काकोडकर, निदेशक, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ने की। अपने संबोधन में उन्होंने विषय की सामाजिक उपयोगिता पर प्रकाश डाला एवं ऐसे कार्यक्रमों को आयोजित करने के लिए परिषद को बधाई दी। संगोष्ठी में किशोर वर्ग में नशीली वस्तुओं का सेवन एवं प्रभाव, किशोरावस्था में मानसिक एवं शारीरिक परिवर्तन, व्यावसायिक मार्गदर्शन इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा हुई। संगोष्ठी का आयोजन आयुर्विज्ञान प्रभाग भापअ केंद्र की सहायता से किया गया। संगोष्ठी के सफल आयोजन के लिए परिषद संगोष्ठी के संयोजक डॉ. शैलेंद्र कुमार कुलश्रेष्ठ एवं डॉ. श्रीमती ए. वी. पाटकर को धन्यवाद देती है।

5.2 अपशिष्ट प्रबंधन - औद्योगिक विकास और पर्यावरण सुरक्षा के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी

अपशिष्ट प्रबंधन पर 28 सितंबर 1998 को एक कार्यशाला, मल्टीपरपज सभागृह, ट्रेनिंग स्कूल हॉस्टेल, अणुशक्तिनगर में संपन्न हुई। कार्यशाला का आयोजन विभाग के प्रशासनिक एवं तकनीकी कर्मचारियों के हेतु किया गया। कार्यशाला का विषय था 'अपशिष्ट प्रबंधन - औद्योगिक विकास और पर्यावरण के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी'। कार्यशाला का उद्घाटन श्री अनिल काकोडकर, निदेशक, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने पर्यावरण सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला। पर्यावरण सुरक्षा में अपशिष्ट के प्रबंधन के महत्त्व को समझाते हुए श्री के. बालू ने ये आश्वासन दिलाया कि नाभिकीय अपशिष्ट के प्रबंधन में हम अनेकों सावधानियों का पालन करते हैं, अतः हमारा पर्यावरण समुचित रूप से सुरक्षित रहता है।

कार्यशाला में श्री एन. के. बंसल, श्री एस. डी. मिश्र, श्री आर. के. माथुर, श्री आर. पी. गर्ग, श्री पी. एम. गांधी एवं श्री टी. एन. कृष्णमूर्ति ने वार्ताएं प्रस्तुत कीं। इन वार्ताओं ने परंपरागत उद्योगों से लेकर नाभिकीय संयंत्रों में अपशिष्ट प्रबंधन तक सभी विषयों को विस्तार से प्रस्तुत किया गया। अपशिष्ट प्रबंधन में भविष्य की चुनौतियों, निक्षेप स्थल की परिकल्पना, रेडियोधर्मी सुरक्षा एवं सुरक्षा का आकलन की वार्ताएं एवं श्री बी. बी. वर्मा की कविता - नीलकंठ सा

निक्षेप स्थल, को विशेष रुप से पसंद किया गया । कार्यशाला का समापन एक वीडियो फिल्म के द्वारा हुआ जिसमें नाभिकीय अपशिष्ट प्रबंधन की विभिन्न तकनीकियों को दर्शाया गया । इस कार्यशाला से लगभग 300 प्रतिभागी लाभान्वित हुए । संगोष्ठी के सफल आयोजन के लिए परिषद श्री एस. डी. मिश्र एवं उनके सहयोगियों का आभार प्रकट करती है ।

5.3 पर्यावरणीय समस्याएं एवं उपकरण विकास

रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन, जोधपुर, के सहयोग से 13-14 नवंबर 1998 को जोधपुर में उपरोक्त विषय पर एक द्विदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया । संगोष्ठी का उद्घाटन डॉ. अशोक कुमार दत्ता, मुख्य नियंत्रक, रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन, नयी दिल्ली ने किया एवं अध्यक्षता परिषद के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद ने की । प्रोफेसर श्यामलाल, कुलपति जयनारायण विश्वविद्यालय, जोधपुर इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रुप में मौजूद थे । श्री अनिल कुमार आनंद ने अपने अध्यक्षीय भाषण में औद्योगिक उन्नति के साथ-साथ पर्यावरण पर भी ध्यान देने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा की इस क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा एक आदर्श उदाहरण है । इस संगोष्ठी में लगभग 75 प्रतिभागी थे । संगोष्ठी में परमाणु ऊर्जा के पर्यावरणीय प्रभाव, भारत में मरुस्थलीय पर्यावरण समस्याएं एवं समाधान, जल प्रबंधन में निर्लवणीकरण, मरु युद्ध कौशल में बहुलक आधारित रेत सम्मिश्रों की उपादेयता, रेडियोधर्मिता व इसके मापन हेतु विकसित संवेदक इत्यादि विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा चर्चा की गयी । इस अवसर पर स्मारिका एवं शोध पत्रों की सारांश पुस्तिका भी प्रकाशित की गयी । संगोष्ठी के सुचारु रुप से संचालन के लिए परिषद डॉ. ब्रजमोहन मिश्र, डॉ. रामगोपाल एवं उनके सहयोगियों का धन्यवाद ज्ञापन करती है ।

6. अन्य :

परिषद के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद के सुझाव पर 'वैज्ञानिक' की बची हुई प्रतियों को देश के विभिन्न, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों को निशुल्क भेजने का कार्य आरंभ किया गया ।

परिषद द्वारा 'भारत में परमाणु ऊर्जा के पचास वर्ष' नामक पुस्तक का हिंदी रूपांतरण करने का निर्णय लिया गया एवं इसके प्रकाशन के लिए वित्तीय सहायता एवं आवश्यक स्वीकृति डॉ. आर. चिदंबरम, अध्यक्ष परमाणु ऊर्जा आयोग से प्राप्त की गयी । सर्वश्री रामप्रसाद, आर. एन. आर्य एवं डॉ. के. सी. भल्ला ने हिंदी रुपांतरण के परिषद के अनुरोध को स्वीकार किया इसके लिए परिषद उनका आभार प्रकट करती है ।

इस वर्ष परिषद के कार्यक्रम सुचारु रुप से संपन्न हुए और इसमें काफी सफलता मिली तथा इन प्रयासों को सभी ने सराहा । इन सभी कार्यक्रमों की सफलता का श्रेय परिषद के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद तथा उपाध्यक्ष डॉ. अशोक कुमार सूरी के मार्गदर्शन एवं कार्यकारिणी के सभी सदस्यों एवं कार्यक्रमों के संयोजकों तथा उनके सहयोगियों को जाता है । प्रशासनिक एवं वित्तीय सहायता के लिए भापअ केंद्र के नियंत्रक महोदय, आंतरिक वित्तीय सलाहकर, अध्यक्ष, कार्मिक प्रभाग, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं प्रभाग, राजभाषा अधिकारी व उप स्थापना अधिकारी (मुद्रण) तथा हिंदी कक्ष के प्रति भी हम आभारी हैं । वित्तीय सहायता के लिए हम इंडियन रेअर अर्थस, ब्रिट एवं एन. पी. सी. के विशेष रुप से आभारी हैं । परिषद को हिंदी से जुड़ी दो अन्य संस्थाओं - राजभाषा कार्यान्वय समिति तथा केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद से भी काफी सहयोग मिला है । इसके लिए हम सर्वश्री बी. भट्टाचार्जी, कु. साधना हेमराजानी एवं श्री आर. एन. आर्य के विशेष रुप से आभारी हैं ।

7. सदस्यता -

इस वर्ष के अंत तक कुल सदस्यों की संख्या 1232 रही जिनमें से 501 विभागीय अजीवन सदस्य, 584 बाहर के अजीवन सदस्य, 115 संस्थागत सदस्य तथा 32 साधारण सदस्य शामिल हैं ।

- राम अवतार अग्रवाल
(सचिव)

कुछ फूल : कुछ कांटे

राजभाषा स्वर्णजयंती के उपलक्ष्य में "वैज्ञानिक" का तत्संबधी विशेषांक (जुलाई-सितंबर, 1999) प्राप्त हुआ। डॉ. चिदंबरम् का यह कथन सटीक है की हिंदी के राजभाषा बनने और परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना की स्वर्णजयंती साथ-साथ होने के कारण यह अवसर परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की समीक्षा करने के लिए भी अच्छा है। इस पृष्ठभूमि में यह अंक "राजभाषा" तथा "परमाणु ऊर्जा" का आकलन करते हुए प्रचुर सामग्री उपलब्ध कराता है। यदि "राजभाषा में उपलब्ध परमाणु ऊर्जा संबंधी साहित्य" पर भी कोई रचना शामिल की जाती तो इस (संयुक्त) अंक में "राजभाषा" और "परमाणु ऊर्जा" की संयुक्त स्वर्णिम आभा में और अधिक वृद्धि हो जाती।

संपादकीय के अंतर्गत विज्ञान से जुड़े व्यक्तियों की अहम् व्यावसायिक जिम्मेदारी के प्रति मौन वरण कर लिया गया है।

"वैज्ञानिक" विशेषांकों की सूची निस्संदेह विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी की आत्मनिर्भरता दर्शाती है लेकिन इनकी अनुपलब्धता इन्हें पढ़ने के लिए सुलभ किये जाने हेतु इनका पुनर्प्रकाशन अपेक्षित है।

इस पत्रिका के वितरण के संबंध में यह उल्लेखनीय है कि किसी कार्यालय के लिए भेजे जाने वाले बंडल की सारी प्रतियों पर ग्राहक के नाम की पर्ची स्टेपल कर दी जाती है। इस पर्ची को निकाल दिये जाने पर कोई नहीं बता सकता कि वह प्रति किस व्यक्ति की है। उचित होगा कि पत्रिका पर ही ग्राहक संख्या व ग्राहक का नाम लिखा जाये।

पत्रिका के समय पर प्रकाशन तथा उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओं के साथ।

रश्मि वार्ष्णेय
सहायक निदेशक (रा. भा.), भारी पानी संयंत्र,
परमाणु ऊर्जा विभाग, फर्टीलाइजर नगर,
बड़ौदा - 391 750

"वैज्ञानिक" का नया अंक 31(3) जुलाई-सितंबर 1999 प्राप्त हुआ। राजभाषा स्वर्णजयंती विशेषांक का यह अंक अच्छा लगा।

व्यवस्थापन / संपादक-मंडल के सदस्यों का परिचय देकर मानो आपने हमसे एक अटूट रिश्ता बना लिया है। आज तक हम लोग वैज्ञानिक पत्रिका के माध्यम से उन्हें सिर्फ नाम से जानते थे लेकिन अब उन्हें हम अपने नज़दीक पाते हैं क्योंकि उन्हें अब हम पहचानने जो लगे हैं। साथ ही साथ उनके जीवन की संक्षिप्त जानकारी भी हमारे लिए काफी प्रेरणादायक है। नोबेल विजेता सर चंद्रशेखर वेंकट रमण ने ठीक ही तो कहा है : "विज्ञान की व्यक्तिगत शाखाओं और उनके विकास में योग देने वाले मुख्य वैज्ञानिकों की जीवनियों का अध्ययन विज्ञान के वास्तविक अर्थ और उसकी आत्मा को ठीक तरह समझने के लिए जरूरी है। उसके पढ़ने से हमें जो स्फुरण प्राप्त होता है, वह प्रायः विज्ञान पर लिखे गये अत्यंत विद्धतापूर्ण औपचारिक ग्रंथों से अधिक होता है।"

मुख्य पृष्ठ पर प्रगत भारी पानी रिएक्टर के आकर्षक मॉडल ने उसके बारे में विस्तार से पढ़ने को मजबूर कर दिया। डॉ. आर. चिदंबरम्, डॉ. अनिल काकोडकर के विचार भी अच्छे लगे। भारत के नाभिकीय विकास के बारे में पढ़ कर ऐसा लग रहा है, जैसे भारत में नाभिकीय विज्ञान की नींव रखने वाले वैज्ञानिक डॉ. होमी जहांगीर भाभा का सपना आज साकार हो रहा है। हिंदी विज्ञान सहित्य परिषद की जानकारी, वैज्ञानिक परिचय में एनरिको फर्मी पर लेख भी अच्छे लगे।

आज हम 21 वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं तथा आशा करता हूं कि यह सदी भारतीय वैज्ञानिकों के लिए महत्वपूर्ण होगी। इसी आशा के साथ।

कृषिचयन
द्वारा डॉ. चतुर्भुज साहु,
विभागाध्यक्ष, मानव विज्ञान विभाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग - 825 301

'वैज्ञानिक' का राजभाषा स्वर्ण जयंती विशेषांक (जुलाई-सितंबर 1999) प्राप्त हुआ। इसके सभी लेख बहुत अच्छे लगे।

डॉ. देवकी नंदन ने अपने लेख "हिंदी दिवस सभी भारतीयों का विजय पर्व है" में लिखा है कि 14 सितंबर 1949 के दिन राजभाषा के रूप में हिंदी की जीत हुई लेकिन क्या आज हिंदी की वह जीत इस देश में कायम है ? गांधी, नेहरू यहां तक कि अहिंदी भाषी तिलक ने जो सम्मान हिंदी को दिया था वह सम्मान क्या आज है ? शायद नहीं है तभी तो आज मैं जहां देखती हूं वहीं अंग्रेजी माध्यम का स्कूल देखती हूं। लोग आज अपने बच्चे को अंग्रेजी पढ़ायेंगे तो तरक्की करेंगे, हिंदी पढ़कर क्या करेंगे ? आज के लोगों के विचार से स्पष्ट है कि अगर बच्चे हिंदी पढ़ते हैं तो उनका भविष्य उज्ज्वल न होकर अंधकारमय हो जाता है। हिंदी जैसी सशक्त भाषा के प्रति लोगों के इस तरह के विचार को ही हम सम्मान कहेंगे ? नहीं न ! मैं मानती हूं अंग्रेजी सीखनी चाहिए परंतु इन भाषाओं का व्यवहारिक उपयोग इतना भी नहीं करना चाहिए कि इससे हमारी ही मातृभाषा लुप्त हो जाय। हम लोगों को तो अपने प्रयत्नों से हिंदी को सबसे उच्च भाषा का दर्जा देकर इसका सम्मान करना चाहिए।

अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए ही 'वैज्ञानिक' पत्रिका ने हिंदी माध्यम में विज्ञान को पेश करने का जो संकल्प लिया है इसके लिए वैज्ञानिक पत्रिका की संपूर्ण टीम को मेरी ओर से धन्यवाद !

सरिता कुमारी
द्वारा डॉ. चतुर्भुज साहु,
विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर मानव विज्ञान विभाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय,
हजारीबाग - 825 301 (बिहार)

'वैज्ञानिक' का जुलाई-सितंबर 1999 अंक मिला। पढ़कर मुझे लगा कि इसके समूचे स्वरूप में बहुत ही अच्छा निखार आया है। इसमें प्रत्येक लेख को अच्छी तरह से प्रस्तुत किया गया है। मेरे विचार से हमारे देश में विज्ञान के क्षेत्र में जो भी प्रगति हो रही है उसका विवरण तथा जानकारी यह पत्रिका आम पाठक तक पहुंचा सकती है। धीरे-धीरे सारे विश्व में भारत को और उसके वैज्ञानिकों को उचित प्रधानता मिल रही है। हमारे छात्र बाहर देश में जाकर कई क्षेत्रों में महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। लेकिन एक बात स्पष्ट है कि हमारे योग्य युवा छात्र मौलिक विज्ञान एवं अनुसंधान के लिए अपने देश में प्रतिष्ठित संस्थानों में वांछित परिमाण में योगदान नहीं दे रहे हैं। उच्च तकनीकी में आगे रहने के लिए हमें आत्मनिर्भर होना बहुत ज़रूरी है और इसके लिए हमारे कामयाब तथा होनहार छात्रों को इस प्रयास में हाथ बटांना चाहिए। अगर इस संदेश को सामने लाने के लिए किसी भी तरह से 'वैज्ञानिक' पत्रिका के जरिये कुछ भी किया जा सके तो बहुत ही बड़ी उपलब्धि होगी। इस दिशा में कुछ आलोचना-चर्चा अगले अंकों में प्रकाशित करें यह मेरा विनम्र सुझाव है।

डॉ. रजनीकांत चौधरी
नाभिकीय भौतिकी प्रभाग,
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

भूल - सुधार

स्वर्ण जयंती विशेषांक (जुलाई-सितंबर 1999) अंक में डॉ. माधव सक्सेना 'अरविंद' के लेख 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद का प्रारंभिक काल' में डॉ. सूर्यदेव मिश्रा के स्थान पर डॉ. सुखदेव मिश्रा छप गया है। पाठक कृपया सुधार लें। इस गलती के लिए हम खेद व्यक्त करते हैं।

संपादक

विकिरण समस्थानिक [रेडियोआइसोटोप]

वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय प्रगति हेतु अनिवार्य साधन

विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी) ने देश में विविध रेडियो उत्पादों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में स्वयं को पूर्णतया समर्पित किया है। रेडियोआइसोटोप के उत्पादन एवं अनुप्रयोग हेतु इस क्षेत्र में अनुसंधान की कुछ उत्कृष्ट सुविधाएं ट्रॉंबे में स्थापित की गयी हैं। स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास कार्यों पर निर्भर रहते हुए 'ब्रिट' (बी आर आई टी) ने रेडियो आइसोटोप उत्पादों का विस्तृत रूप से विकास किया है एवं देश - विदेश के 1000 से भी अधिक संगठनों की आवश्यकताओं की आपूर्ति की है।

कुछ महत्वपूर्ण उत्पाद एवं सेवाएं इस प्रकार हैं :

- **विकिरण भेषज (रेडियोफार्मास्युटिकल्स) :**
  विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान एवं थायराइड रोगों के उपचार हेतु।
- **विकिरण प्रतिरक्षा आमापन (रेडियो इम्यूनो ऐसे) किट्स :**
  हार्मोन्स तथा औषधियों की सूक्ष्म मात्रा के आकलन हेतु।
- **रेडियोरसायन एवं विकिरण स्रोत :**
  अनुसंधान, औद्योगिक अनुप्रयोगों एवं कैन्सर रोगोपचार हेतु।
- **रेडियोग्राफी कैमरे एवं उपसाधन :**
  सांचों तथा वेल्डों के रेडियोग्राफिक निरीक्षण हेतु।
- **गामा किरणन उपस्कर :**
  चिकित्सा उत्पादों के विकिरण निर्जर्मीकरण या खाद्य किरणन हेतु।
- **विकिरण निर्जर्मीकरण सेवा :**
  प्रयोज्य चिकित्सा उत्पादों जैसे, आई. सैट, वी. कैथीटर (मूत्रनलिका), जाली का कपड़ा, स्र्ह, शल्य ब्लेड, दस्तानें, रिक्त पात्र आदि के विकिरण निर्जर्मीकरण हेतु।

कृपया अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें :

वरिष्ठ प्रबंधक एवं विपणन संचालन प्रभारी,

विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी)

वि. ना. पुरव मार्ग, देवनार, बम्बई - 400 094.

टेलीफोन : 555 1676/555 3145

तार : ब्रिट एटम, बम्बई - 94, टेलेक्स : 011 72212 ब्रिट इन

With Best Compliments from

INDIAN RARE EARTHS LTD.

Offers the following products :

Beach Sand Minerals

Ilmenite (TiO_2 : 60%, 55% & 50%)
Natural Rutile
Zircon/Zircon Flour
Granular Silimanite (-65 to + 100 Mesh)
Garnet
Leucoxene and
Synthetic Rutile

Rare Earths

Rare Earths Chloride
(original and heavies-lean)
Rare Earths Fluoride
Rare Earths Oxide
Cerium Oxide/cerium Hydrate
Didymium Carbonate
Samarium/Yttrium/Gadolinium/Europium
Concentrates (Individual and Mixed)

Particular attention of Interested buyers/users is drawn to the following products available at ver attractive prices :

Synthetic Rutile (93% TiO_2)
Ilmenite : MK Grade (55% TiO_2 Min.)
Zircon (65% ZrO_2 with max 0.2% TiO_2 and 0.1 Fe_2O_3)
Granular Silimanite (Min. 59% Al_2O_3)
Samarium Oxide (96%)

For futher details, please contact :

The Chief General Manager (Mktg.)
Indian Rare Earths Ltd.
Sherbanoo, 6th Floor, 111, Maharshi Karve Road,
Churchgate, Mumbai - 400 020. INDIA
Tel. : (022) 209 6800, 203 0915 # Fax : (022) 200 4430
Tlx. : (11) 83122, 83254 # Cable : RAREARTH, BOMBAY, INDIA

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के लिए डॉ. गोविंद प्रसाद कोंठियाल द्वारा संपादित तथा श्री गोरा चक्रवर्ती द्वारा प्रिंट शॉप, चेंबूर, मुंबई (फोन : 555 2348 / 556 5279) में मुद्रित व प्रकाशित।

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. 18862 / 70

दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ. प्र. के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूल व कॉलेजों के लिए स्वीकृत ।

नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र

नाभिकीय ईंधन और संधिरहित नलिका प्रौद्योगिकी में
भारत का एकमात्र उद्यम

हमारे उत्पाद

● **नाभिकीय**
- पी.एच.डब्ल्यू.आर. और बी.डब्ल्यू.आर. रिएक्टरों के लिए ईंधन बंडल
- जर्केलॉय मिल उत्पाद (जोड़ वेल्डित और संधिरहित - नलिकाएँ, छड़ें और तार, चद्दरें और पट्टियाँ)
- एफ.बी.टी.आर. और पी.एफ.बी.आर. के लिए उप समुच्चय
- जर्कोनियम ऑक्साइड और जर्कोनियम स्पंज

● **गैर-नाभिकीय**
- संधिरहित जंगरोधी इस्पात नलिकाएं
- संधिरहित टाइटेनियम नलिकाएं
- उच्च शुद्धता युक्त इलेक्ट्रॉनिक सामग्री
- विशेष मिश्र धातु और मिल उत्पाद

● **हमारी सेवाएं**
- एस.एस., टाइटेनियम, कॉपर और अल्यूमिनियम का बहिर्वेधन
- इलेक्ट्रॉन बीम वेल्डन
- एन.डी.टी. तकनीक में प्रशिक्षण और प्रमाणन
- विश्लेषणात्मक सेवाओं में विशेषज्ञता
- धातुकीय एवं यांत्रिक परीक्षण
- गुणता आश्वासन और एन.डी.ई. में परामर्श सेवाएं
- विशेष उद्देश्य की वेल्डन मशीनों और निर्वात भट्ठियों का अभिकल्पन और संविचरन

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :
महाप्रबंधक (विपणन)
नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र
परमाणु ऊर्जा विभाग
हैदराबाद - 500 062 (भारत)

दूरभाष : (91 - 40) 712 3648
फैक्स : (91 - 40) 712 1209
712 1362
712 1305
टेलेक्स : 0425-7004 एनएफसी इन